

चित्रा मुदगल के कहानी संग्रह 'लाक्षागृह' में आधुनिकता बोध

डॉ. भीमराव आम्बेडकर विश्वविद्यालय, आगरा
एम.ए. उपाधि की आंशिक अभिपूरति हेतु
प्रस्तुत
शोध परियोजना

शोध निर्देशक

डॉ० बीरेन्द्र कुमार शर्मा
(असिस्टेंट प्रोफेसर – दिन्दी विभाग) इंस्टीट्यूट
आफ ओरिएण्टल फिलॉसफी
वृन्दावन, मथुरा (उ.प्र.)

शोधार्थी

राजु

अनुरागी

अनुक्रमांक – 2400210210007

पिताजी का नाम – श्री शिव प्रसाद कक्षा

– एम.ए. द्वितीय सैमेस्टर



डॉ. भीमराव आम्बेडकर विश्वविद्यालय, आगरा
(इंस्टिट्यूट ऑफ ओरिएण्टल फिलॉसफी, वृन्दावन)

घोषणा पत्र

मैं राजु अनुरागी पुत्र श्री शिव प्रसाद, यह घोषणा करता हूँ कि प्रस्तुत शोध शीर्षक "चित्रा मुदगल के कहानी संग्रह 'लाक्षागृह' में आधुनिकता बोध" मेरा मौलिक कार्य है तथा सबंधित विषय के किसी अन्य साहित्य से कॉपी नहीं किया गया है। मैंने यह कार्य डॉ० बीरेन्द्र कुमार शर्मा, एसोसिएट प्रोफेसर (हिन्दी विभाग), इंस्टिट्यूट ऑफ ओरिएण्टल फिलॉसफी, वृन्दावन के सुयोग्य दिशा निर्देशन में संपन्न किया है। सबंधित साहित्य का उपयोग केवल इस क्षेत्र में अनुसंधान की प्रगति और लाभ की समीक्षा के लिए किया गया है और इसे किसी अन्य डिग्री के लिए प्रस्तुत नहीं किया गया है।

शोधार्थी

राजु अनुरागी

कक्षा – एम.ए. द्वितीय सैमेस्टर रोल

न. 2400210210007



डॉ. भीमराव आम्बेडकर विश्वविद्यालय, आगरा
(इंस्टिट्यूट ऑफ ओरिएण्टल फिलॉसफी, वृन्दावन)

प्रमाण पत्र

प्रमाणित किया जाता है कि प्रस्तुत शोध जिसका शीर्षक "चित्रा मुदगल के कहानी संग्रह 'लाक्षागृह' में आधुनिकता बोध" है, जिसे राजु अनुरागी, रोल नं. 2400210210007, इंस्टिट्यूट ऑफ ओरिएण्टल फिलॉसफी, वृन्दावन, मथुरा द्वारा परास्नातक उपाधि हेतु प्रस्तुत किया गया है। यह शोध कार्य अधोहस्ताक्षरी के दिशा निर्देशन और निरीक्षण में स्वयं शोधार्थी द्वारा महाविद्यालय में सम्पन्न किया है। इस शोध का कोई हिस्सा किसी अन्य डिग्री हेतु प्रस्तुत नहीं किया गया है।

शोध निर्देशक

डॉ. बीरेन्द्र कुमार शर्मा
(असिस्टेंट प्रोफेसर – हिन्दी विभाग)
इंस्टीट्यूट ऑफ ओरिएण्टल फिलॉसफी
वृन्दावन, मथुरा (उ.प्र.)

अग्रेषित एवं अनुशंसित

विभागाध्यक्ष

प्राचार्य

आभार

निवेदन

प्रस्तुत शोधकार्य मेरे शोध निर्देशक डॉ. बीरेन्द्र कुमार शर्मा (असिस्टेंट प्रोफेसर – हिन्दी विभाग) इंस्टीट्यूट ऑफ ओरिएण्टल फिलॉसफी वृन्दावन, मथुरा (उ.प्र.) के कुशल मार्गदर्शन एवं उत्साहवर्धन से ही पूर्ण हो सका है। अतः मैं असीम स्नेह, सहयोग एवं मार्गदर्शन के प्रति अन्तःमन से उनका हार्दिक आभारी हूँ। साथ ही मैं आभारी हूँ प्राचार्य प्रो. पी. के. सारस्वत जी का जिन्होंने जिस सहृदयता एवं उदारनीति से मुझे मार्गदर्शन दिया है वह प्रेरणादायी व अविस्मरणीय है आपका मार्गदर्शन जीवन में प्रगति के पथ पर अग्रसर करने में अग्रणी भूमिका का निर्वाह करगे। अंत में मैं अपने माता-पिता, मित्रगणों की मंगलप्रेरणा तथा सहयोग ने मेरा मार्गदर्शन करके इस शोध कार्य को सरलता प्रदान की एवं मुझमें विश्वास का संचार करते रहे हैं। मैं हृदय के अन्तःस्थल से इन सभी के प्रति कोटि-कोटि आभार व्यक्त करती हूँ। दिनांक

शोधार्थी

राजु अनुरागी

अनुक्रमणिका

इकाई सखं या	इकाई का नाम	पृष्ठ सखं या
1	शीर्षक	6
2	उददेश्य	7
3	पूर्व मे ं हुए शोध कार्यो का विवरण	8
4	शोध प्रविधि	9
5	प्रस्तावना	10
6	अध्याय-1-चित्रा मुदगल का व्यक्तित्व एव ं कृतिव	
7	अध्याय-2-आधुनिकता बोध का आशय एवं स्वरूप	
8	अध्याय-3-'लाक्षागृह' कहानी संग्रह का सामान्य परिचय	
9	अध्याय-4-'लाक्षागृह' कहानी संग्रह मे ं आधुनिकता बोध	
10	उपसंहार	
11	शोध सार	
12	संदर्भ ग्रन्थ सचूी	

शीर्षक

चित्रा मुद्गल के कहानी संग्रह 'लाक्षागृह' में आधुनिकता बोध

उद्देश्य

चित्रा मुद्गल एक सजग सर्वेदनशील और ईमानदार महिला रचनाकार हैं। उनकी रचनाओं की रचनाभूमि उनका सुपरिचित अनुभव क्षेत्र हैं। अपने अनुभव के दायरे में आये विषयों को बड़ी कलात्मकता के साथ प्रस्तुत भी किया है। उनकी कहानियों एवं उपन्यासों की कथावस्तु सामाजिक हैं। कथ्य के अनुरूप पात्र चयन चित्राजी की कहानी कला की बड़ी विशेषता है। उनके पात्र हमारे सामाजिक जीवन में हमारे आस पास दिखाई देनेवाले हैं। उनके उपन्यासों के ही समान उनकी कहानियों के भी केन्द्रीय पात्र स्त्री है। कहानियों में उनकी भाषा अत्यन्त पारदर्शी बिम्बात्मक और मनोदशाओं की सक्षम अभिव्यंजक है। उनकी

भाषा पात्रानुकूल एवं परिवेशानुकूल है जो शहरी मध्यवर्गीय परिवेश से उपजी सामान्य बोलचाल की है। सामान्य व्यवहार की भाषा होने से उसमें एक सहज प्रवाह भी लक्षित होता है। लेखिका की भाषा में पात्रों की अनेकानेक भावनाओं को प्रसंगानुकूल व्यक्त करने की पर्याप्त क्षमता है। खास तौर से नारी मन की परतों को यथार्थ रूप में खोलने में उनकी भाषा पर्याप्त समर्थ पायी है। अपने समय तथा परिवेश का साक्षात्कार करनेवाली उनकी भाषा कथ्य के अनुरूप मुद्रा धारण करती हुई नजर आती है। कथा संयोजन की विभिन्न शैलियों में चित्राजी ने वर्णनात्मक शैली को ही मुख्य रूप से अपनाया है। यही शैली ही उनको प्रिय है जिसमें सम्प्रेषण की क्षमता सबसे ज्यादा है। चित्राजी ने अपनी रचनाओं में घर-परिवार के भीतरी यथार्थ के साथ साथ राजनीतिक यथार्थ का भी प्रस्तुत किया है। 'आवाँ' उपन्यास, 'जगदम्बा बाबु गाँव आ रहे हैं' 'बन्द' 'पाठ', 'लपटें' जैसी कहानियाँ इसकी मिसालें हैं। नारी जीवन की विविध समस्याओं, उसकी जीवनगत दशाओं का परिवार के धरातल पर किया गया रेखांकन चित्रा मुद्गल की महत्वपूर्ण देन कही जा सकती है। भाषा की कलात्मकता शैली की सक्षमता और बिम्बों के वैभव के साथ परिवेश विधान उनकी कहानियों की खासियत है। उनकी कहानियाँ सामंती परिवेश में स्त्री की पीड़ा, महानगरीय परिस्थितियों में मूल्य इन्सान के पतन, संयुक्त परिवार, भ्रष्टाचार आदि अनेक समस्याओं को अत्यन्त मार्मिक एवं धारदार ढंग से उभारती है। उनकी भाषा शैली और विषय वस्तु आज की कहानी के अनुकूल है।

पूर्व में हुए शोध कार्य

चित्रा मुद्गल के कथा-साहित्य को आधार बनाकर शोधार्थी की दृष्टि से देखने पर उनके कथा-साहित्य पर निम्न शीर्षकों के अंतर्गत शोध कार्य संपन्न किए जा चुके हैं—

1. चित्रा मुद्गल का कथा-साहित्य संवेदना और शिल्प, श्री रंजिनी वी., केरल विश्वविद्यालय, 2008.
2. चित्रा मुद्गल के कथा साहित्य में नारी, प्रकाश नवनितराव सावते, स्वामी रामानंद तीर्थ मराठावाड़ा विश्वविद्यालय, 2015.

3. चित्रा मुद्गल के कथा—साहित्य का समाजशास्त्रीय अध्ययन, बारीआ सरोज बहन एम. , सौराष्ट्र विश्वविद्यालय, 2019.
4. चित्रा मुद्गल के कथा साहित्य का शिल्प वैशिष्ट्य, रुचिकीर्ति, छत्रपति साहू जी महाराज विश्वविद्यालय, 2014.

शोध प्रविधि

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है । मनुष्य होने के कारण उसमें जिज्ञासु प्रवृत्ति पनपती रहती है। जिज्ञासाओं को शांत करने के लिए वह निरंतर छान-बीन करता है तथा छान-बीन के समय शोध की विभिन्न पद्धतियों का प्रयोग करता है। प्रस्तावित शोध कार्य को करते समय शोध की मौलिकता के साथ उसकी प्राथमिकता को स्मृति में रखते हुए विभिन्न सदं भं ग्रंथ, शब्दकोश को देखते हुए वर्णनात्मक, विश्लेषणात्मक, समाजशास्त्रीय, तुलनात्मक प्रविधियों का प्रयोग किया जाएगा ।

अतः विषय से संबंधित लेखिका से विचार-विमर्श के साथ साक्षात्कार और प्रश्नावली शोध प्रविधि का प्रयोग करते हुए शोध विषय एवं शोध कार्य को सार्थक बनाने का प्रयत्न किया जाएगा। सदं भं ग्रंथ, आधार ग्रंथ, शब्दकोश एवं पत्र-पत्रिकाओं के प्रयोग द्वारा शोध कार्य की तथ्यपरक सामग्री को एकत्रित किया जाएगा ।

प्रस्तावना

महिला लेखन को महिलाओं का लेखन कहने के पीछे एक सजीव जीवन-दृष्टि है। महिला लेखन में जो खास-बू-बास नजर आ रही है, उसी की वजह से उसे विशेष दर्जा दिया गया है। सामाजिक धरातल पर महिला और पुरुष में विभेदक दीवारें खड़ी करना जितना असंगत है, उतना ही असंगत है साहित्य में महिला लेखन की अलग पहचान की शिनाख्त न करना। इस कथन का तात्कालिक मूल्य तो है कि जब भारतीय सामाजिक व्यवस्था में महिला और पुरुष में अधिकारों के स्तर पर सर्ववैधानिक भेदभाव नहीं है तो साहित्य में इस तरह का वर्गीकरण कितना जायज है? गहराई में देखें तो महिला – लेखन ने अपनी खासियत जिन्दगी और साहित्य की खास समझ से कायम की है। अपने वर्ग एवं जाति की अनूठी अभिव्यंजना द्वारा नारी लेखन स्वतः अलग पहचान की अधिकारी हो गया है। इससे साहित्य का वैचारिक धरातल व्यापक हुआ है और एकांगिता का बोध तिरोहित होने लगा है। यद्यपि पुरुष रचयिताओं की रचनाओं में स्त्री मन की गहनतम प्रेरणाओं, स्पर्शाओं एवं मनोभावों को उद्घाटित करने का प्रयास किया गया है तथापि उनकी दृष्टि उस नाविक की सी है, जाँ समुद्रगर्भ से बाहरी दुनिया का मुजरा पेरिस्कोप से कर रहा हो। जमीन पर पाँव रखे बिना जमीन के छनूँ का एहसास नहीं हो पाता, उसी भाँति महज अनुमान से स्त्री मन की थाह पा लेना सहज नहीं। इस दृष्टि से देखें तो साहित्य में सृजनरत महिलाओं ने साहित्य की अधूरी दुनिया को भरा परूँ संसार बनाने में अत्यंत योगदान दिया है।

अध्याय – 1

चित्रा मुद्गल का व्यक्तित्व एवं कृतिव

व्यक्तित्व का सामान्य परिचय समाज और साहित्य शताब्दियों से एक दूसरे के पूरक रहे हैं। हिंदी साहित्य की प्रतिष्ठित साहित्यकार चित्रा मुद्गल का व्यक्तित्व एवं कृतित्व सामाजिक संघर्ष और चेतना का प्रतीक है। वे साहित्य जगत की प्राख्यात कथा शिल्पी, अपनी चेतना की अभिव्यक्ति के लिए ही लेखन करने वाली, वर्ष 2018 की साहित्य अकादमी पुरस्कार विजेता, बहुमुखी प्रतिभा की धनी, समाज सेवी, निर्भय पत्रकार एवं प्रखर चेतना की संवाहिका हैं। इन्होंने अपनी रचनाओं में स्त्री, मजदूर और सर्वहारा वर्ग की समस्याओं को प्रभावी तरीके उठाया है। चित्रा मुद्गल के चेहरे पर निर्धनों, असहायों, मजदूरों और महिलाओं के लिए लड़ने की चमक स्पष्ट महसूस होती है। वे बचपन से ही रूढ़ियों को तोड़ने वाली रही हैं। चित्रा जी का सहज, सरल, सौम्य व्यक्तित्व आत्मीय भावबोध से भर देता है। उनका दीप्तिमान आभामण्डल सहज ही अपनी ओर आकर्षित करता है। उन्होंने अनेक विधाओं जैसे – कहानी, संस्मरण, आलेख समीक्षा, नाटक, कविता, रेखचित्र, निबन्ध, लेख, साक्षात्कार आदि पर अपनी लेखनी चलाई है। किंतु मुख्यतः प्रसिद्ध इन्हें उपन्यासों से ही मिली है। अब तक उनके चार उपन्यास, सोलह कहानी संग्रह, तीन नाटक, दो वैचारिक संकलन, सात सम्पादित पुस्तकें, तथा मेरे साक्षात्कार प्रकाशित हो चुके हैं। तीन खण्डों में उनकी समस्त कहानियाँ आदि-अनादि के नाम से प्रकाशित हुई हैं। इनकी अनेक अनूदित रचनाएँ भी हैं। चित्रा जी की कहानियों पर फिल्मों एवं धारावाहिकों का भी निर्माण हुआ है। वे आज युग परिवर्तन के लिए नव चेतना जगाने वाली प्रतिनिधि रचनाकार हैं। इनकी रचना का निर्माण समाज में युगबोध, सामाजिक चिंतन, आस्था, आक्रोश, प्रेम की अनुभूति एवं विसंगति, आधुनिकता बाजारवाद, हर्ष, विषाद आदि सम्मिलित हैं। बाल संवेदनाओं युवा आक्रोश, वृद्ध समस्या, पूँजीवाद का सामाजिक आर्थिक, परिदृश्य, फिल्मी ग्लैमर, विज्ञापन जगत एवं मजदूर यूनियन संघ की वस्तु स्थितियों को उन्होंने अपने साहित्य में ज्वलंत रूप से प्रस्तुत किया है। वास्तव में चित्रा जी ने अपने समय की विद्रूपताओं को अपनी लेखनी के संघर्षान द्वारा जिस सक्षम भाषिक संवेदना के साथ परत-दर-परत उकेरा है। वह आश्चर्य चकित कर देने वाला है।

पारिवारिक पृष्ठभूमि चित्रा मुद्गल की बहुमुखी प्रतिभा ने उन्हें अलग पहचान दी है। इनके बचपन का अधिकांश समय गाँव निहालीखेड़ा में बीता। एक साक्षात्कार के द्वारा इन्होंने स्वयं बताया कि, “टाटपट्टी पर बैठकर हम पढ़ते थे। सरकंडे के डंडल को ब्लेड से छीलकर हम कलम बनाते थे और सफदे खड़िया वाले बुदिव्का (दवात) में डुबोकर पाटी पर सुलेख लिखते थे। बाबा कहते थे और हमारे घर पर काम करने वाले हमें स्कूल तक छोड़कर आते थे। दूसरे बच्चे समूह बनाकर जाते थे। उन्हें छोड़ने – लाने कोई नहीं जाता था। मैं सोचती थी कि दूसरे बच्चों की तरह मैं अकेले क्यों नहीं आ जा सकती। स्कूल के रास्ते दोनों तरफ अरहर के खेत थे, साथ ही कचेलिया की बेलें भी। उनका स्वाद आज भी याद है। जन्म

चित्रा मुद्गल का जन्म 10 दिसम्बर, 1944 को मद्रास प्रेसीडेन्सी (चेन्नई, तमिलनाडु) स्थित ‘एगमोर’ में हुआ जो आई.एन.एस. अश्विनी अस्पताल के नाम से जाना जाता है। इनका मूलनिवास उ.प्र. के उन्नाव जनपद का निहालीखेड़ा गाँव। यह बैसवाड़ा क्षेत्र उन्नाव से लगभग 70 कि.मी. की दूरी पर स्थित/चित्रा जी निहालीखेड़ा गाँव के सुप्रसिद्ध जमींदार ठाकुर डॉ. बजरंग सिंह की पोती हैं। इनका परिवार कट्टर रूढ़िवादी था। माता—पिता एवं परिवार दादा—दादी चित्रा जी के दादा का नाम ठाकुर बजरंग सिंह और दादी का नाम ‘राम राजी कुँवर’ था जो अमेठियन ठाकुरों की बटेरी होने के कारण अमेठियाइन के नाम से जानी जाती थी। वे तीन बेटे और चार बेटियों की माँ थीं। चित्रा जी के सबसे बड़े भाई ‘ठाकुर लाल बहादुर सिंह’ मझले उनके पिता ‘ठाकुर प्रताप सिंह’ तथा छोटे चाचा ‘अम्बिका प्रसाद’ बुआवों में सबसे बड़ी ‘कुनाल’ मझली ‘बीट’ फिर बिटालू और सबसे छोटी बुआ ‘विट्टी’ थीं। चित्रा जी पर साहित्यिक प्रभाव दादी जी से पड़ा। बचपन में ही उनकी दादी उनसे रामचरित मानस एवं दुर्गासप्तशती का पाठ कराकर सुनती थी। चित्रा जी की कहानी ‘डोमिन काकी दादी द्वारा मारे गये चाटे को ही संस्मरणात्मक रूप में लिखी गई है। माता—पिता एवं गुरुजन चित्रा जी की माँ विमला ठाकुर उत्तर प्रदेश के प्रतापगढ़ जनपद के बयालीस गाँवों के तालुकेदार की बटेरी थीं जो अमीशंकर गाँव के निवासी थे। इनकी माँ नाना गयाबक्श सिंह की मझली संतान थी। चित्रा जी के पिता का नाम ठाकुर प्रताप सिंह था। वे सामंतवादी मानसिकता के थे और जमींदारों में पाये जाने सभी गुण—अवगुण उनमें विद्यमान थे जो नौसेना में उच्च पदस्थ होने कारण और पुष्ट हो गये थे। इनके पिता को लिखने का

शौक था। अंग्रेजी में रोमांटिक कविताएँ और नाटक लिखने वाले इनके पिता गुलाम अली के संगीत के रसिक थे एवं फिल्म अभिनेत्री सुरैया के दीवाने थे जो इनकी मित्र मंडली में शामिल थी इनके मित्र मण्डली में हाजी मस्तान जैसे लोग भी शामिल थे। उनका कई-कई औरतों से संबंध, शराब, शिकार और न जाने क्या-क्या अवगुण था। इसका कारण था वे इनकी माँ को सख्त अनुशासन में रखते थे। उनका कार्य क्षेत्र रसोई घर तक ही सीमित था वे उनके अफसर मित्रों के खान-पान की व्यवस्था में ही जुटी रहती। कहीं आने-जाने के लिए भी पिछले दरवाजे का प्रयोग करती। बाजार जाने पर भी इच्छित वस्तु पर ऊंगली रखकर गाड़ी में वापस बैठ जाती थी। उन्होंने माँ को खुलकर सांस नहीं लेने दी।

5 मार्च 1975 को इनके पिता जी ने इनकी माता को छोड़ दिया और 31 जनवरी, 2009 में लगभग 85 वर्ष की अवस्था में इनकी मृत्यु हो गई। गुरु प्रोफेसर अनन्तराम त्रिपाठी जी को चित्रा मुद्गल अपनी सफलता का श्रेय देती हैं। अपने स्कूली दिनों को याद करके वे बताती हैं कि स्कूल में जब उन्हें डांट पड़ती तो उनके गुरु उन्हें गले से लगा लिया करते थे। वे आज भी उन्हें याद करके उनके प्रति कृतज्ञ भाव से नतमस्तक हो जाती हैं। जब भी चित्रा जी को कोई पुरस्कार मिलता तो उनके गुरुजन बहुत ही गर्वान्वित होते और उनकी पीठ थपथपाते। उनके गुरु चाहते थे कि वे कॉलेज में ही प्राध्यापिका की नौकरी करें। किंतु उन्हें उस समय उचित नहीं लगा आज हँसते हुए कहती हैं कि मुझे उनकी बात मान लेनी चाहिए थी, कम से कम आज रिटायर्ड होने के बाद पेंशन मिल रही होती।

शिक्षा चित्रा जी के पिता के सने में होने के कारण उनके तबादले होते रहते थे जिसका प्रभाव चित्रा जी की शिक्षा पर भी पड़ा। इनकी पहली कक्षा की पढ़ाई मुंबई के विलेपार्ले सेंट्रल स्कूल में सन् 1952-53 में हुई। दूसरी, तीसरी तथा चौथी कक्षा की पढ़ाई 'निहालीखेड़ा' के कन्या पाठशाला में हुई। घाटकोपर पून बोर्ड मुंबई से हाई स्कूल तक की शिक्षा प्राप्त की व इण्टरमीडिएट मुंबई के ही सोमैया कॉलेज से पूरी की तथा स्नातक मुंबई विश्वविद्यालय से पूरी की। चित्रा जी ने अपनी रुचि के अनुसार 1966 में मुंबई के जे. जे.

स्कूल ऑफ सरं था सें चित्रकला में डिप्लोमा किया जबकि इनके पिता जी को इनका चित्रकला सीखना बिल्कुल नापसंद था वें तो उन्हें बन्दूक चलाना और घुड़सवारी करना सिखाना चाहते थे किंतु चित्रा जी ने उनकी आकांक्षाओं पर पानी फरे दिया । इन्हें नृत्यकला में भी विशेष रुचि थी और गुरु सधु पाडोरा स्वामी एवं सावित्री देवी से भरत नाट्यम की शिक्षा प्राप्त की । चित्रा जी की दादी को यह बिल्कुल नापसन्द था। वह कहती थी कि, "ब्याह-शादी, मुंडन – छदे न के अवसरो पर दरवाजे पर नाचने वाली का बुलाकर नचवाया जाता है, खुद नाचा नहीं जाता है। इन्होंने काफी समयान्तराल के बाद एम. ए. पत्राचार के माध्यम से हिंदी में एस०एन०डी०टी० विश्वविद्यालय से 1994 में सम्पन्न किया। आपने शोध कार्य भी प्रारम्भ किया था पर वह किसी कारणवश अधूरा छटू गया। आपने शैक्षणिक जीवन में विभिन्न उपलब्धियाँ प्राप्त की। विभिन्न प्रतियोगिताएँ, वादद्विवाद, खेलकूद, नृत्य एवं चित्रकला में हमेशा अव्वल रहीं और स्कूल से लेकर कॉलेज तक ढेरों सर्टिफिकेट अर्जित किये। पढ़ाई के दौरान ही पिता के मित्र कामगार अघाड़ी के नेता दत्ता सामन्त के सम्पर्क में आई और श्रमिक आंदोलनों से जुड़कर श्रमिकों की समस्याओं को सुलझाने का प्रयास किया। बाइयों जो कि झुग्गी बस्तियों में रहती थी और उत्पीड़न से द्रवित होकर उनके बुनियादी अधिकारों की बहाली के लिए संघर्षरत संस्था 'जागरण' की बीस वर्ष की वय में सचिव बनी।

ठाकुर से मुद्गल बनने तक का सट्ठ वर्ष चित्रा जी बचपन से ही विद्रोही स्वभाव की रही।

ठाकुर बजरंग खानदान की इस

जिद्दी लडकी ने पेशे से प्रखर कवि, कथाकार, पत्रकार ब्राह्मण युवक अवध नारायण मुद्गल से 17 फरवरी 1965 को प्रेम विवाह कर परिवार तथा समाज की रूढ़ियों को तोड़ा। चित्रा ठाकुर से चित्रा मुद्गल बनने तक का सफर फिल्मी कहानी की तरह ही रोमांचक था। अपनी प्रथम मुलाकात के विषय में बताते हुए वह कहती हैं कि, "सेंट जेवियर में एक वाद-विवाद प्रतियोगिता में हमारे सर श्री जगदम्बा प्रसाद दीक्षित और अवध नारायण मुद्गल जी जूरी में थे। हमने ट्रॉफी जीती तो हमें जूरी से मिलवाया गया। जब मुझे बताया गया कि ये अवध नारायण मुद्गल जी हैं तो मैंने उनसे पूछा कि आप ही लिफ्ट में मुझे मिले थे? उनके हाँ कहते ही मैं उन पर बरस पड़ी। आपकी चिड़ी मुझे मिल गई थी। अब एक

लिस्ट भी दे दीजिए कि लेखन की ए बी सी डी सीखने के लिए मुझे कौन-कौन सी किताबें पढ़नी चाहिए। तो यह थी हमारी पहली मुलाकात। दरअसल इस क्रोध के पीछे का कारण यह था कि 20 वर्ष की अवस्था 1964 में उन्होंने कॉलेज में आयोजित कहानी प्रतियोगिता में भाग लिया। उनकी कहानी ने प्रथम स्थान प्राप्त किया। उनकी कहानी को पूर्व घोषणानुसार सारिका पत्रिका में प्रकाशित होनी थी। उनके गुरु प्रो. अनन्त राम त्रिपाठी जी ने कहानी का सारिका पत्रिका में देने कहा। कहानी तो छपी नहीं उल्टा संपादक महोदय का एक पत्र अवश्य मिल गया जिस पर चित्रा जी पहचानते ही बिफर पड़ी थीं। अवध नारायण मुद्गल और चित्रा जी का विवाह आर्य समाज मंदिर माटुंगा मुंबई में सम्पन्न हुआ। विवाह में भाई की भूमिका फिल्म पत्रकार हरीश तिवारी ने निभाई। विवाहोपरान्त अवध जी और चित्रा जी तीन सितारा झुग्गी मांडपू में रहने आ गये। इस अन्तर्जातीय विवाह का विरोध होना स्वाभाविक था और हुआ भी। जमींदार ठाकुरों के लिए यह सहन करना असंभव था कि उनकी बटेरी एक सामान्य से बाह्य लड़के का वरण करे। उनकी माँ विमला ठाकुर चित्रा पर आक्रोश प्रकट करते हुए कहती हैं कि, "यदि ऐसा तू अपने गाँव में करती तो कुएँ में धक्का देकर कह दिया जाता कि लड़की का पाँव फिसल गया था।"

चित्रा जी का शुरुआती वैवाहिक जीवन सघर्षपूर्ण था। उन्हें अपनी हवेली छोड़कर माटुप के झोपड़ पट्टी इलाके में आठ बाई आठ की खोली में रहना पड़ा। सड़क के सामने लाइन लगाकर खड़े होना पड़ा। अपनी चित्रकारी और नृत्य जैसे महँगे शौक को छोड़ना पड़ा और यहाँ तक कि मुंबई छोड़कर विस्थापित जैसी मनःस्थिति लेकर दिल्ली आना पड़ा। दिल्ली में उन्हें सर्वेश्वर दादा, जिज्जी मन्नू दी और राजेन्द्र भाई साहब ने अपनी वाल्सल्यमयी गरमाहट में समेट लिया। मन्नू दी के घर में रहते हुए कभी अहसास नहीं हुआ कि वे अपने घर में नहीं हैं। आर्थिक तंगी को दूर करने के लिए अवध नारायण मुद्गल ने कविताएँ एवं कहानियाँ लिखना छोड़कर कई एजेंसियों में विज्ञापन लिखना प्रारम्भ किया और चित्रा जी ने साप्ताहिक हिन्दुस्तान, सयूरी से स्तम्भ लेखन किया।

विवाहोत्तर पारिवारिक जानकारी चित्रा मुद्गल के परिवार में पति अवध नारायण मुद्गल (दिवंगत), पुत्र राजीव

मुद्गल, पुत्रबधू शैली मुद्गल, पोता शाश्वत, जुड़वा पोतियाँ अनद्या और आद्या मुद्गल हैं। पति अवध नारायण मुद्गल उ. प्र. के ही आगरा जनपद की बाह तहसील के ग्राम एमे नपुरा के एक सामान्य ब्राह्मण परिवार में जन्म लिया। वं स्वभाव से सर्वेदनशील एवं गम्भीर व्यक्तित्व वाले थे। विवाह के समय अवध जी टाइम्स ऑफ इण्डिया की पत्रिका 'सारिका' के उपसंपादक थे। इन्होंने 'पराग' वामा, छाया मयूर, आदि पत्र पत्रिकाओं में संपादन का कार्य किया। लेखन के साथ उनका घर परिवार एवं जीवन मूल्यों में गहरी आस्था थी। खुले विचारों वाले थे। वे चित्रा जी से उम्र में नौ वर्ष बड़े थे। वं हर मुश्किल परिस्थिति में चित्रा जी के साथ रहते थे। बस वं कभी-कभी शिकायत करते थे कि चित्रा जी अपने बच्चों के बजाय सामाजिक गतिविधियों में अधिक उलझी रहती है। इसका कारण था कि वं अपने बच्चों से बहुत प्यार करते थे। अपर्णा की मृत्यु के बाद तो वं गहरे सदमें में चले गये और मृत्योपरांत ही इससे उबर पाये। 15 अप्रैल 2015 को लम्बी बीमारी के बाद उनका स्वर्गवास हो गया, पर चित्रा जी उन्हें आज भी अन्दर महसूस करती है। उनके होने के एहसास को बताते हुए वं भावुक होकर बताती है कि, "मैं रोज सुबह उठकर सबसे पहले उन्हें कहती हूँ (उनकी तस्वीर की तरफ इशारा करते हुए) पंडित जी गुड मॉर्निंग! मैं रोज दो कन चाय बनाती हूँ एक अपने लिए और एक अवध जी के लिए और उनकी चाय उनके सामने यहीं टेबल पर लाकर रखती हूँ। अपनी खत्म करने के बाद मैं उनसे पूँछती हूँ, पंडित जी आप नहीं पियेगें क्या? कोई बात नहीं, इसके बाद ओवन में गरम करके मैं स्वयं उनका वाला कप भी पी जाती हूँ। पुत्र राजीव मुद्गल राजीव मुद्गल मुंबई में कम्प्यूटर इंजीनियर हैं। माता – पिता की तरह उन्हें भी लेखन में रुचि है वे एपिक एवं नाटक आदि लिखते हैं। अपर्णा

पूर्ण मीडियाकर्मी

अपर्णा चित्रा जी की दूसरी संतान है जो राजीव से पाँच वर्ष छोटी थी। इन्हें भी चित्रकला और लेखन से बहुत प्रेम था। अपर्णा की शादी मृदुला गर्ग के छोटे पुत्र शशांक के साथ हुई थी, विवाह के छः महीने बाद ही जब वं पति – पत्नी चित्रा जी से मिलने आ रहे थे तो दुर्भाग्यवश एक सड़क दुर्घटना में दोनों की 1993 में मृत्यु हो गयी। अपर्णा की जिंदगी और लेखन में साम्य था, जिसको याद करके चित्रा जी कहती है कि, "जब

तुमने आँखें दान की तो बहुत लड़ी मैं तुमसे । तुमने जब किडनी दान करने का फार्म भरा, फार्म छीन मैंने चिथड़े – चिथड़े कर दिया । तुमने कहा तुम जो कुछ लिखती हो कहती हो सिर्फ औरों के लिए है? अपने छद्म से तुम कब मुक्त होगी माँ? मैं चिढ़ गई थी । अब तुम्हें यकीन दिला सकती हूँ तुमसे पिछड़ जरूर गई हूँ, अपर्णा, परास्त नहीं हुई। लिखने और कहने के बीच पहल सी उठ खड़ी हुई हूँ। चित्रा जी ने अपर्णा का हर सामान उसकी मृत्यु के बाद भी सम्भाल के रखा है।

उन्होंने कहा कि अवध जी ने उसका सामान उन्हें फेंकने नहीं दिया। यहाँ तक कि उसकी काठ की चूड़ियाँ भी जिससे वे अब भी कभी – कभी पहन लेती हैं । पुत्रवधु शैली

शैली अपर्णा की प्रिय सहेली थी जाँ प्रसिद्ध गीतकार शब्द कुमार की पुत्री हैं। अपर्णा के जाने के बाद शैली इस घर में बहू बन कर आई। इनके पुत्र राजीव का विवाह शैली के साथ हुआ शैली ने न सिर्फ घर को सम्भाला बल्कि इन दोनों पति-पत्नी को भी भावनात्मक सम्बल प्रदान किया। आज बातों- बातों में चित्रा जी शैली की तारीफ करते नहीं थकती। गिलिगडु (पौत्र-पौत्रियाँ) राजीव और शैली के विवाह के कुछ समय बाद चित्रा जी का घर बाल किलकारियों से गूँ उठा जी हाँ यही है उनके गिलिगडु। जो उसके जीवन को चिड़ियों की चह-चहाहट की तरह अपनी किलकारियों द्वारा खुशियों से भर दिये। ये हैं पोता शाश्वत और जुड़वा पोतियाँ अनद्या और आद्या जो अब किशोर हो चुके हैं। अनद्या का नाम अपर्णा की अंग्रेजी कविताओं के आधार पर रखा गया है। अनद्या मृदुभाषी है और आद्या वाचाल। शाश्वत दिल्ली यूनिवर्सिटी से ग्रेजुएशन कर एवं मास कम्युनिकेशन का कोर्स कर, एनीमेशन फिल्मों का निर्माण कर रहे हैं। अभी हाल ही में उनकी कोरोना पर दो एनीमेशन "हाउ शॉप डिस्ट्रॉय कोरोना" 'वी सल्यूट मेडिकल हीरोज फाइटिंग कोविड नाइन्टीन' आई है। अनद्या और आद्या डी यू से राजनीति शास्त्र में एम. ए. कर रही है जिनका उद्देश्य आगे चलकर सिविल सर्विसेज की तैयारी करना है। बाह्य एवं आंतरिक व्यक्तित्व चित्रा जी का गौरवर्ण लम्बाकद और चौड़ा ललाट उनके व्यक्तित्व को प्रखर बनाता है। उनकी सुराहीदार लम्बी गरदन, खूबसूरत आँखें, धनुषाकार होठ , तीखी नासिका और थोड़ा सा निकली हुई टुड्डी सब उन्हें लावण्यमयी रूप प्रदान करते हैं । वं घर पर फूल आस्तीन के कुरते और दुपट्टे में होती हैं, चेहरे पर गोल चश्मा और बड़ी बिन्दी उन्हें शालीन, भव्य और गरिमामयी

व्यक्तित्व प्रदान करता है। उनका व्यक्तित्व ताप में तपे खरे सोने के समान दमकता रहता है। हँसमुख और मनोहर चेहरा सुबह के धूप के समान हमेशा खिला रहता है। वं जब किसी साप्ताहिक समारोह में होती हैं तो अक्सर साड़ी में लिपटी होती हैं। सिल्क या कॉटन की चौड़े पट्टे वाली साड़ियाँ, लम्बा आस्तीन का ब्लाउज, दायें हाथ में चौड़े पट्टे वाली घड़ी, बाएँ हाथ में अपर्णा की काठ की चूड़ियाँ, कान में एक छोटा मोती जड़ा कर्णफूल, गले में मोतियों की माला और साथ में खुला लहराता लम्बा आँचल । इस रूप में जब वं वह आत्म विश्वास से लबरेज सधे कदमों से मंच की आरे बढ़ती है तो साक्षात् सरस्वती की प्रतिमूर्ति लगती हैं। चित्रा जी के बाह्य व्यक्तित्व से ज्यादा उनका आन्तरिक व्यक्तित्व प्रभावित करता है। उनका स्वभाव विनम्र, आवाज मधुर एवं हृदय कोमल और विशाल है। पहली बार मिलने पर ही गर्मजोशी से अपने ममतामयी अंक में समेट लेना, अपार प्यार व दुलार देना, 75 वर्ष की अवस्था में भी अपने हाथ से चाय बनाकर पिलाना, सहज और सरल रूप से आपकी सभी जिज्ञासाओं का घण्टों धैर्य पूर्वक उत्तर देना । आपको आभास भी नहीं होगा कि आप एक प्रतिष्ठित साहित्यकार के सामने बैठे हैं बल्कि ऐसे । लगता है कि आपका काँड़े अपना है जिससे आप वर्षों बाद मिले हैं। उनके इस उदार प्रशान्त व्यक्तित्व के सामने किसी का भी मस्तक श्रद्धा से झुक जाएगा। उनके मन में निरीह, असहाय, श्रमिक, वंचित और महिलाओं के लिए अपार पीड़ा है। वह अपने साहित्य के माध्यम से और समाज सवे । द्वारा सदैव उनके लिए कुछ न कुछ करती रहती हैं। चित्रा जी को कृत्रिमता से सख्त घृणा है । वं अपनी कथनी और करनी में बिल्कुल फर्क नहीं करती हैं। लेखकीय जीवन का शुभारंभ चित्रा जी के लेखकीय जीवन का शुभारंभ उनके बचपन में ही हो गया था जब वे अपने पिता जी के नाम से टूटे-फूटे शब्दों में अधकचरी चिट्ठी लिखी थी। इस पत्र ने यह समझा दिया था कि उन्हें क्यों लिखना चाहिए। जब उन्हें अपने बप्पा के पास कोई बात पहुँचानी होती वह चिट्ठियाँ लिखकर उनके सिरहाने तकिये के नीचे रख आती और वे पढ़कर उनकी चिन्दियाँ बना देते। इस तरह उन्हें अपने को अभिव्यक्त करने का जरिया मिल गया। शायद यही समय था जब उन्होंने लिखना शुरू किया और आज तक नहीं रुका। चाहे जीवन में कितना भी दबाव और संघर्ष आया लेकिन लेखन निरंतर चलता रहा वं कहती हैं कि, “मैं नाम की वह लड़की कह सकती है कि मैं अपनी चेतना की अभिव्यक्ति के लिए लिखती हूँ। स्वयं को होने को महसूस करने और उस होने की सामाजिक उपस्थिति और

उस सामाजिक उपस्थिति के दायित्वों और सरोकारों को पूरा करने के लिए लिखती हूँ ।

भावना साहित्यकार की पूँजी होती है और चित्रा जी में इनका अम्बार भरा पड़ा है उनके बाल्यकाल की घटनाओं ने उनमें विद्रोही सवेंदनशीलता और विचार करने की प्रवृत्ति की भाव भूमि तैयार की। अपने गाँव का एक ऐसा प्रसंग जिसका उनके बाल मन पर अत्यधिक प्रभाव पड़ा। भीखू जाँ उनके घर में ही काम करता था, अनाज की एक बोरी चुराने पर उनके ताऊजी ने नीम के तने से बाँधकर हंटर से इतना पीटा कि उसकी देह लहलुहान हो उठी । तने से बँधी उसकी देह आर्तनाद कर रही थी और बाद में एक तरफ लुढ़क गई। भीखू के माता-पिता ने उनके ताऊजी से क्षमा याचना किया। उसकी बहनें उनके पैरों पर गिर पड़ी फिर भी वे नहीं पसीझें इस दर्दनाक दृश्य को देखकर वे सहम गईं। एक और बात जो उनके मन में गहरे तक बैठ गई। वह था दादी का चाँटा । चित्रा जी के घर नर्दवा साफ करने के लिए डोमिन काकी आती थी। काम करने बाद इनकी दादी ने कहा कि उन्हें अचार और रोटी देकर आओ और चित्रा जी ने डोमिन काकी को छकूर रोटी अचार उनके आँचल में डाल दिया जिस पर दादी जी ने उन्हें जोरदार चाँटा मारा। यह बात इन्हें गहरे तक चुभ गई । और अबोध बाल मन में एक सवाल छोड़ गई कि आखिर दादी का ऐसा दोहरा व्यवहार क्यों एक तरफ तो दादी उन्हें डोमिन कहने पर कहती है काकी कहो और छूने पर... । इस तरह परिवार में सदैव करने के उपरान्त चित्रा जी ने मजदूर आंदोलन का मंच चुना और उनके लिए जमकर सदैव किया । लेखन के क्षेत्र में सर्वप्रथम आपने लिंटास एडवरटाइजिंग एजेन्सी में कापीराइटिंग की जिसमें 50 रुपये प्रति शब्द मिलते थे। डेढ़ वर्ष पश्चात् काम छोड़, 1972-1974 ई. तक वहीं फ्रीलान्सिंग की, इसके पश्चात् धर्मवीर भारती के प्रोत्साहन पर धर्मयुग पत्रिका में लिखना प्रारम्भ किया। 1977 से 1980 तक टाइम्स ऑफ इण्डिया की फिल्म पत्रिका माधुरी की आमुख कथा लेखिका रहीं । यद्यपि चित्रा जी ने लेखन को व्यवसाय के रूप में विवाह के बाद अपनाया किंतु लेखन कार्य विद्यार्थी जीवन से ही करने लगी थी। इन्होंने इण्टरमीडिएट में प्रो. अनन्त राम त्रिपाठी (सोमैया कालजे के आग्रह पर कालेज में हो रही कहानी प्रतियोगिता के लिए कहानी लिखी । चित्रा जी को साहित्य लेखन के लिए प्रेरित करने व्यक्तित्व में धर्मवीर भारती ही नहीं थे बल्कि उनके पति अवध नारायण मुद्गल, सर्वेश्वर दयाल सक्सेना एवं राजेन्द्र

यादव दम्पति भी थे। यह विषम परिस्थितियों का समय था और इसी सघर्ष रूपी जमीन से ही 'रूना आ रही है' का बीजारोपण हुआ। अभाव बोध और सघर्ष के उस अहसास ने उन्हें तोड़ा नहीं बल्कि शक्ति और सम्बल प्रदान किया। अभाव में भी उन्होंने हिम्मत नहीं छोड़ी। लेखन और सम्पादन का छोटा-छोटा कार्य करके पति-पत्नी दोनों घर खर्च चला रहे थे। तभी यह विचार मन में आया कि, "पहली जरूरत है घर खर्च! तीस, चालीस रुपये में घर की साग-सब्जी दूध का खर्च निकल सकता है।" कागज और स्याही बहुत सस्ते हैं। अपने को अभिव्यक्त करना है तो कागज कलम का साथ बुरा नहीं, और फिर कागज कलम का साथ उनकी साँसें बनता चला गया। बालकाल से जो आघात कुण्ठित होकर उनके अवचेतन मन में विराजमान थे, प्रेम

विवाह के पश्चात् उसमें और भी वृद्धि हुई। अब उनके हृदय में उठने वाले शैलाब डायरी के पन्नों में समाने लायक नहीं रहे। अब वे भावनाओं का बाँध तोड़कर बाहर आने के लिए बते अब हो चुके थे जिसकी तीव्रता चित्रा जी बखूबी समझ रही थीं। अनिश्चय समाप्त हुआ और इन्होंने अब अबाध गति से लेखन किया केवल कहानियों में ही नहीं बल्कि विभिन्न विधाओं। अनुभव एवं कार्य क्षेत्र

1. चित्रा जी विद्यार्थी जीवन से ही विभिन्न आंदोलनों से जुड़ चुकी थी। मुंबई में नारकीय जीवन जी रही झोपड़ पट्टियों में रहने वाली, घरेलू और चौका बरतन कर जीवन यापन करने वाली महिलाओं के बुनियादी अधिकारों की बहाली के लिए काम करने वाली संस्था जागरण की महज 20 वर्ष की आयु में सचिव बन गई। वह 'जागरण' संस्था उत्थान के लिए निरंतर कार्य किया।
2. सचिव 1965 से 1972 तक रहीं। उन्होंने इन महिलाओं के महिलाओं वाले स्वावलम्बी बनने के लिए प्रेरित करने वाली संस्था 'स्वधार' की भी 1979 से 1983 तक सक्रिय कार्यकर्त्री रहीं।
3. एन.सी.आर.टी. (राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद) की वूमेन स्टडीज यूनिट की कुछ महत्वपूर्ण पुस्तक योजनाओं में जैसे 'दहेज दावानल, बेगम हजरत महल' 'स्त्री समता' में 1986 से 1990 तक बतौर निदेशक कार्य किया।
4. 'एकता सहेली' के रूप में 'मध्य प्रदेश महिला मंच' की सक्रिय कार्यकर्त्री रहीं।
5. फिल्म सेसं र बोर्ड की मानद सदस्य सन् 1978 से 1999 तक रहीं।

6. आशिर्वाद फिल्मस अवार्ड में वतौर जूरी सन् 1980 में आमंत्रित हुई ।
7. 'आकाशवाणी की सर्वभाषा राष्ट्रीय नाट्य स्पर्धा की जूरी सदस्य सन् 1995 में बनी ।
8. तीन वर्षों तक लगातार 'टाइम्स ऑफ इण्डिया' की प्रतिष्ठित पत्रिका माधुरी की आमुख कथा लेखिका ।
9. विभिन्न पत्र, पत्रिकाओं जैसे 'महाराष्ट्र टाइम्स' (अनूदित), 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान', 'सयू' 'श्री' (गुजराती) बाल पत्रिका पराग में 'चिम्' नाम से स्तम्भ लेखन । वे लिटरेटवर्ल्ड डाट काम एवं भास्कर की भी स्तम्भ लेखिका रही हैं ।
10. 49वें 'राष्ट्रीय फिल्म पुरस्कार 2002 की जूरी सदस्य और इंडियन पैनोरमा 2002 की सदस्य होने का गौरव उन्हें प्राप्त हुआ ।
11. छठा विश्व हिंदी सम्मेलन लंदन, सातवाँ और आठवाँ न्यूयॉर्क में 'सम्मान समिति' और 'शैक्षिक समिति' की सदस्य रहीं ।
12. आई०सी०सी०आर० की मौलाना आजाद निबन्ध प्रतियोगिता की 2002 से 2008 तक बोर्ड सदस्य रहीं ।
13. प्रसार भारती ब्रॉडकास्टिंग कारपोरेशन ऑफ इंडिया की 2003 से 2008 तक बोर्ड की सदस्य रहीं ।
14. प्रसार भारती की महत्वाकांक्षी योजना – (साहित्य कला संस्कृति के उत्थान हेतु) 2005 से 2008 तक 'इंडियन क्लासिक की चैयर पर्सन होने का सम्मान उन्हें हासिल हुआ ।
15. भारत सरकार के संस्कृत विभाग, मानव संसाधन विकास मंत्रालय की वरिष्ठ फेलोशिप सन् 2000 से 2002 में प्राप्त हुई ।
16. नेशनल बुक ट्रस्ट की हिंदी सलाहकार समिति की मानद सदस्य 2005 से 2008 तक बनाई गई ।
17. अंतरिक्ष एवं परमाणु ऊर्जा विभाग की 2005 से 2008 तक संयुक्त हिंदी सलाहकार की मानद सदस्य रहीं ।
18. सन् 2006 से 2009 तक डाक विभाग में हिंदी सलाहकार समिति की सदस्य मनोनीत ।
वर्तमान में 'समन्वय' स्त्री शक्ति, स्त्री शक्ति तथा उ० प्र० महिला मंच, सयू सिंघान, 'समता महिला मंच' एवं अभिव्यक्ति से सम्बद्ध अनेक अन्य महत्वपूर्ण संगठनों से भी संबंध

द्ध हैं। उपाधि, पुरस्कार एवं सम्मान चित्रा जी साहित्य जगत की प्राख्यात साहित्यकार के रूप में जानी जाती है ।

साहित्य जगत की अनेक संस्थाओं द्वारा समय समय पर इन्हें सम्मानित किया जाता है ।

व्यक्तित्व विकास के आयाम हिंदी भाषा की प्रखर विद्वान चित्रा जी को हिंदी भाषा के अलावा अंग्रेजी, गुजराती, मराठी का भी का ज्ञान रखती हैं। आपने 'दि हाइना एण्ड अदर स्टोरीज' अंग्रेजी में कहानी संग्रह लिखा एवं एक जमीन अपनी उपन्यास का अंग्रेजी में क्रूसेड नाम से अनुवाद किया । प्रिय पुस्तकें चित्रा जी की प्रिय पुस्तकों में अमृत लाल नागर की 'अब मैं नाच्यो बहुत गोपाल, अज्ञेय द्वारा रचित 'शेखर एक जीवनी', मुंशी प्रेमचन्द्र द्वारा रचित 'गोदान' धर्मवीर भारती द्वारा रचित काव्य नाटक 'अंधायुग' तथा गौकी द्वारा रचित 'ऑल्ल्ड मैन एण्ड दि सी मिंगे'

एवं 'माँ' आदि है। चित्रा मुद्गल को महात्मा गांधी बहुत प्रिय है। साहित्यिक जीवन के

आदर्श पुरुष

अमृत लाल नागर हैं। अटल विहारी वाजपेयी के व्यक्तित्व से भी वे बहुत प्रभावित हैं ।

कृतित्व का सामान्य परिचय हिंदी साहित्य की अग्रगण्य लेखिकाओं के रूप में चित्रा मुद्गल का नाम लिया जाता है। अपने लेखन में इन्होंने जहाँ एक ओर निरंतर रीतती जा रही मानवीय संवेदनाओं को रेखांकित करते हुए निम्न वर्ग के पात्रों को, उनकी जिंदगी के संपूर्ण दायरे में घुसकर उसका अध्ययन करती हैं वही दूसरी तरफ आधुनिकता की रफ्तार में फंसी जिंदगी की जटिलता से जूझते हुए अपसंस्कृति के गर्त में धँसते जा रहे आधुनिक मानवीय मूल्यों को स्तब्ध कर देने वाली तस्वीर भी संवेदनात्मक गहराई से उकेरती है। उनकी सक्षम, कोमल संवेदनशील दृष्टि एवं मर्मस्पर्शी अभिव्यक्ति संपूर्ण रचनाओं में स्पष्ट रूप से देखी जा सकती है। उनके साहित्य में विशेष कर कथा साहित्य में नारी प्रेयसी रूप ने नहीं चित्रित हुई है न ही सिर्फ नारी जीवन की त्रासदी ही उसमें मुखर हुआ है आज की स्वाभिमानी नारी, उसकी अदम्य संघर्ष शीलता और उसका प्रखर सार्थक विद्रोह । चित्रा जी का कथानक अपनी एक अलग पहचान रखता है वह वर्तमान समाज, उसके

विभिन्न वर्ग समूह को उन्हीं स्थितियों परिस्थितियों में विम्बात्मक रूप से चित्रित करता है जिसमें वह है। इनके कथानक में महानगरीय पूँजीपतियों का छद्म व गाँव जीवन से उखड़े हुए लोग जो शहरों में झुग्गी झोपड़ियों में रहते हैं उसका एहसास सजीव रूप से जीता हुआ नजर आता है। एक विकल्पहीन अस्तित्व के रूप में। उपन्यास 'एक जमीन अपनी' और उपन्यास 'आवां' के रूप में यह हमारे सामने चरितार्थ होता है। इसमें अनेक पतों में पतित होती नैतिकता जिसे इन कथाओं का केन्द्रीय पात्र अपने अस्तित्व से गुजरते हुए साक्ष्य के रूप में रेखांकित करता चलता है वह उसका समीक्षक भी है और अहेरा गया आखेट भी। 'एक जमीन अपनी' और 'आवां' दो ऐसे ही महाकथाएँ हैं जो मुंबई को एक बहुउद्देशीय शहर के रूप में चरित्रांकित करती हैं ये दो ही महाकाव्य हैं। इन दोनों महाकाव्यों की नायिका अंकिता और नमिता पाण्डये का हृदय जगत की इन कथाओं को विस्तार देता है। ऐसे ही जीवन चरित्रों जैव प्रसंगों का चित्रा जी के पास अद्भुत भण्डार है जो कथा बनने के साथ-साथ उपन्यास के ढाँचे में अनायास ही जुड़ता भी चला जाता है। एक सफल कथाकार की यह खूबी होती है कि वह ऐसे पात्रों को अपने साहित्य के विषद फलक पर समेटता चले और उन्हें कथा के जरूरत के मुताबिक ही अहमियत दे ताकि उसकी कहानी कहने के अंदाज में रोचकता हो। और यही अंदाज उसे पहचान दे। चित्रा मुद्गल को विमर्श – विशेष किसी परिधि में नहीं बाँध सका है। उनका पहला उपन्यास 'एक जमीन अपनी' स्त्री विमर्श पर केन्द्रित है। स्त्री विमर्श पर केन्द्रित होते हुए भी वह भारतीय सदं भों में नारी – मुक्ति से सही प्रारूप की तलाश कारण वर्तमान

'स्त्री-विमर्श' के उत्तेजक और अक्रामक मुहावरे से पर्याप्त अलग है। 'आवां' में इन्होंने समूचे श्रमजीवी समाज की मुक्ति के व्यापक परिप्रक्षेप में 'नारी मुक्ति' को व्यक्त किया है और मुक्तिबोध के इस बोध के इस धारणा को पुष्ट करती है कि मुक्ति अगर है तो सबके साथ है। 'गिलिगडु' को इन्होंने एक नये कलेवर के साथ वर्तमान समाज में बढ़ रही वृद्धों की समस्या, उन्हें अपने ही घर में परित्यक्त जीवन जीने की समस्या को बहुत ही मार्मिक ढंग से उकेरा है। इनकी कहानियों का मुख्य विषय समकालीन जीवन स्थितियों में मनुष्य के भीतरी संसार का उद्घाटन है। और वह अपने भीतर के द्वंद्व को आत्मीय अनुभूति और कलात्मकता के साथ अंकन भी करती चलती हैं इनकी कहानियाँ केवल अभिव्यक्ति की कहानियाँ न होकर कई स्तरों पर प्रभावित होने वाली कहानियाँ हैं। इनकी

कहानियों में मानवीय संबंधों की आंतरिक जटिलताओं का अंकन है पात्रों को उनके परिवेश से काटकर शिमला या कश्मीर के डाक बगं लों में ले जाकर नहीं बल्कि उनके रोजमर्रा के सठ्ठार्षों के बीच सामाजिक व्यवस्था की पृष्ठभूमि में कसी हैं, जहाँ रोटी कपड़ा मकान के लिए सठ्ठार्ष

भी है और जीवन की रूढ़ स्थितियों और पारवारिक परंपराओं से टकराव भी । चित्रा मुद्गल की कहानियों में जीवन व जगत विभिन्न रंग-बिरंगे पक्षों के दर्शन होते हैं। सब कुछ भोगे हुए यथार्थ का अभिव्यक्ति सा लगता । चित्रा जी ने मुख्यतः उपन्यास और कहानियाँ ही लिखा है। शुरुवाती दौर में कविताएँ भी लिखीं थी । इससे याद करते हुए वे कहती हैं कि, “शुरुवाती दिनों में मैंने अवध को रिझाने के लिए कुछ प्रणय की कविताएँ लिखा जिससे देखकर वे कहते, “और अच्छा लिख सकती है आप” तो इससे समझ जाइए मैं कितनी अच्छी कविताएँ लिखती थी।” कालान्तर में उन्हें महसूस हुआ कि यह विधा मेरे लिए उपयुक्त नहीं है । कविता में कवि स्वयं की अनुभूतियाँ व्यक्त करता है जबकि कहानी उपन्यास में अनेक पात्रों द्वारा स्वयं को अभिव्यक्त करता है । उसमें लेखक केवल परकाया प्रवेश करता है इसलिए आपने कविताएँ लिखना छोड़ दिया और लघु कथा लिखने के बाद आप कविता लिखने का सुख पाती हैं। उपन्यास और कहानियों के साथ-साथ आप लगातार लघु कथाएँ लिख रही हैं। आपका ‘बयान’ लघु कथा स्रंजन इसी का परिणाम है जो सामयिक प्रकाशन नई दिल्ली से प्रकाशित हुआ है जिसमें लगभग तीस लघु कथाएँ स्रंजित हैं। आपका सृजन न सिर्फ कथा साहित्य तक सीमित रहा बल्कि कहानी और उपन्यास के अलावा अच्छी स्रंजित कथाएँ अनुवादिका का भी कुशलता से स्रंजित किया । बाल साहित्य पर भी अपनी दक्षता का परिचय दिया है। इस प्रकार आपकी सृजनात्मक अभिव्यक्ति की मुख्य विधाएँ हैं कहानी, उपन्यास, चित्रकला, कविता समाज सेवा । पत्रकारिता, बाल साहित्य और सम्पादन।

कहानी संग्रह प्रथम कहानी स्रंजित सेनारा नाम से पुरस्कृत होकर मुंबई के नवभारत टाइम्स के

रविवासरीय के अंक में 25 अक्टूबर, 1964 को पुरस्कृत हुई ।

उपन्यास सतत चेतना और सक्षम दृष्टि की प्रतीक उपन्यासकार चित्रा मुद्गल के अब तक के

पाँच उपन्यास प्रकाशित हो चुके हैं। उपन्यासों का सामान्य परिचय चित्रा मुद्गल जी के पास अनुभवों का विपुल भण्डार है इनके उपन्यासों में लेखन की कल्पनाशीलता के साथ समाज की वास्तविकता अपने में समेटे हुए हैं उनके उपन्यास वास्तविक घटनाओं पर आधारित हैं। चित्रा जी के उपन्यासों में नारी अस्मिता और समता की पुरजोर कोशिश की गई है। इन्होंने अपनी कलम से नारी के विषय में जो कुछ भी लिखा है वह अत्यन्त सार्थक और प्रासंगिक है। अपने उपन्यासों में लेखिका ने सामाजिक रूढ़ियों, कुरीतियों और सामंतवादी सोच पर प्रहार किया है। इनके उपन्यास इनके वैयक्तिक अनुभूति और व्यापक दायित्व का प्रतिफल हैं।

एक जमीन अपनी चित्रा जी का प्रथम उपन्यास एक जमीन अपनी है जो कि 1990 में लिखा गया। इसमें वर्तमान बाजारवाद की उपभोगवादी संस्कृति में नारी के शोषण का नवीन तरीका और विषय उद्घाटित हुआ है। उन्होंने नारी शोषण का विज्ञापन जगत में सार्थक औपन्यासिक प्रस्तुत कर अपने को स्थापित कर दिया है। आज विज्ञापन जगत प्रत्येक घर को सुविधा और आधुनिकता के नाम पर जिस तीखी चमक से चकाचौंध कर रहा है और उसका समाज पर जो विपरीत प्रभाव पड़ रहा है वह इस उपन्यास में दिखाया गया है। विज्ञापन जगत की ग्लैमरस विभ्रमित कर देने वाली दुनियाँ में जितना हिस्सा पूँजी का है, शायद उससे कम हिस्सेदारी नारी और उसकी देह की नहीं है। इस नई सत्ता पाने के लोभ में स्त्री अपनी देह और प्रकृति के माध्यम से बाजार के लुभावने संन्देशों को ही उपभोक्ता तक नहीं पहुँचायी, बल्कि परदे के पीछे एक बड़ा क्रियात्मक समूह भी स्त्रियों से बनता है। यह उपन्यास विज्ञापन की उस दुनियाँ की कहानी है जहाँ समाज की इच्छाओं को प्रज्ज्वलित करने के लिए पेट्रोलियम पदार्थ तैयार किये जाते हैं और स्त्री के उस संघर्ष को भी जो नारी इस स्वप्निल दुनियाँ में अपनी रचनात्मक क्षमता की पहचान अर्जित करने के नहीं मानती। नीता बंधन मुक्त जीवन जीती है। इसका विचार है कि सवे सुअल पवित्रता एवं अपवित्रता की भावना से स्त्री को मुक्त होना चाहिए। तभी वह समाज में मनुष्यों की तरह जीवित रह सकती है। नीता अपनी देह के बल पर जिंदगी में सब कुछ हासिल करती

है किंतु अन्ततोगत्वा वह अकेलेपन के कुण्ठा में डूब जाती है। अंकिता नीता के बिल्कुल विपरीत है। अंकिता सब कुछ अपनी प्रतिभा और मेहनत के बलबूते हासिल करना चाहती है, नारी विद्रोह से उसका आशय पारिवारिक सत्ता के प्रति अनास्था भाव से नहीं है बल्कि सत्तार्जन के लिए आत्म संहार से है। अंकिता पारिवारिक मूल्यों को तो बरकरार रखना चाहती है किंतु पति के अय्याशियों और ज्यादातियों को सती साध्वी बने रहकर स्वीकारना भी नहीं चाहती। उसने स्वेच्छा से अलग रहना स्वीकार किया उसी सुधांशु से “जिससे पाने के लिए उसे उन दुर्गम पगडण्डियों से गुजरना पड़ा जो जाति धर्म, परंपरा और मान्यताओं के पहरो से गुजरती है।” अंकिता नारी मुक्ति से जुड़े उन ज्वलंत प्रश्नों से दो चार होती है जो उपभोक्ता संस्कृति को पोषित करने वाले विज्ञापन जगत में संहारित हैं। इसमें वह नारी मुक्ति से जुड़े जन ज्वलंत प्रश्नों से दो चार होती है जो वैचारिकता आधुनिकता, समता और जीवन शैली के नाम पर सचंार माध्यमों के जरिये एक सुनियोजित षड्यंत्र तहत, यह पुरुष प्रधान समाज नारी को सौंप रहा है। स्त्री संहार और चेतना से लेखिका का तात्पर्य है कि परंपरागत जीवन मूल्यों में जितना कुछ सार्थक है, प्रासंगिक एवं मानवतायुक्त है उसे स्वीकार कर अन्याय के विरुद्ध लड़ना है। पश्चिम में नारी मुक्ति आंदोलन वहाँ की परिस्थितियों की देन है किंतु हमारी परंपरा पश्चिम से भिन्न है। परिवेश का यथार्थ को जानकर उसके अलोकतंत्रीय अवसरवादों से संघर्ष करना वर्तमान स्त्री की नियति है। स्त्री चिन्तन बहे तर मानवीय सरोकारों के लक्ष्यों की लड़ाई है।

‘आवां’

मजदूर जीवन का महाकाव्य ‘आवा’ चित्रा मुद्गल का सर्वाधिक चर्चित उपन्यास है। इस उपन्यास का प्रकाशन 1999 ई. में हुआ। लेखिका का ‘आवा’ एक महत्वाकांक्षी प्रयास है जो स्त्री विमर्श की गहरी पड़ताल के कारण इस युग का एक उल्लेखनीय उपन्यास है। यह ट्रेड यूनियन और मजदूर आन्दोलन से संबंधित किसी महिला कथाकार द्वारा रचित साहित्य जगत का प्रथम उपन्यासकार है। इसके केन्द्र एक मध्यम वर्गीय युवती नमिता पाण्डेय है जिसने अपने पिता मजदूर नेता देवीशंकर पाण्डेय के पक्षाघात होने के कारण, पारिवारिक भरण-पोषण के लिए नौकरी की तलाश में पिता के ही मित्र अन्ना साहब के पास ट्रेड यूनियन

जाना पड़ता है यहाँ पर वह मजदूर आंदोलन और ट्रेड यूनियन की वास्तविकता को बिल्कुल नजदीक से देखती है। वह सिर्फ देखती ही नहीं बल्कि उसका हिस्सा बनकर जीती भी है। उसके नेतृत्व की कुंठाओं और दुर्बलताओं से वितृष्णा के कारण वह उससे दूर भी चली जाती है लेकिन दुनिया में काफी कुछ अपने ढंग से देख लेने के बाद अपने अंतिम निर्णय में वह फिर से अपनी जड़ों की तरफ लौट आती है। यह उपन्यास नमिता पाण्डेय का अपनी दृष्टि से दुनियाँ देखने का हौंसला और फिर अपनी जड़ों की ओर वापसी का सटर्प है। वास्तव में यह वह आवां है जाँ उसे अपने हिसाब से गढ़ता पकाता है जो अंत में अपने निर्णय स्वविवर्के के आधार पर लेती है। आवां में स्त्री पात्रों की सखं या अत्यधिक है जो भारतीय समाज में स्त्री की नियति और हैसियत का ग्राफ तैयार करती है यहाँ पर एक ओर किशोरीबाई, सुनन्दा, शारदावेन जैसे जुझारू स्त्रियाँ हैं तो दूसरी ओर अंजना वासवानी जैसी कुट्टनी स्त्रियाँ भी जाँ अपने स्वार्थ के कारण निरीह लड़कियों को सजं य कनोई जैसे शिकारियों को सौंप देती हैं। यह उपन्यास मुंबई की पृष्ठभूमि पर आधारित है। समर्पित मजदूर नेता कामगार अघाड़ी के महासचिव देवीशंकर पाण्डेय पर विरोधी छुरे से हमला करता है कुछ समय बाद वह लकवे का शिकार हो जाते हैं और बिस्तर पर पड़ जाते हैं। उनकी बड़ी पुत्री नमिता, कनिष्ठ पुत्री मुनिया और छोटे पुत्र छुन्नू है। नमिता उपन्यास की केन्द्रीय पात्र है पिता की बीमारी के कारण घर की जिम्मेदारी उस पर आ जाती है उसकी पढ़ाई छटू जाती है। कामगार अघाड़ी के उनके पिता के मित्र अन्ना साहब उसे यूनिन कार्यालय में नौकरी देते हैं किंतु बाद में उनके विकृत कामुक मानसिकता की वजह से वह नौकरी छोड़ देती है २२

एक ओर अन्ना साहब का विराट व्यक्तित्व दूसरी तरफ उसकी अपरिपक्व अवस्था वह अपने आपको प्रतिरोध करने की स्थिति में न पाकर कामगार अघाड़ी की नौकरी छोड़ देना ही बहे तर समझती है इसके लिए वह अपने पिता से परमीशन लेती है और यह निवेदन करती है कि वह नौकरी छोड़ने के विषय में उनसे कुछ न पूछे। वह अपनी माँ के साथ श्रमजीवी संस्था में पापड़ बेलने का काम शुरू करती है इसके साथ वह घर पर फाल भी लगाती है जबकि यह काम उसे बिल्कुल पसन्द नहीं है। माँ उसके साथ सौतेला व्यवहार करती है और अपमानित एवं उत्पीड़ित करने का एक भी अवसर हाथ से जाने नहीं देती

उसके पास पिता का स्नेह है जो छीड़ हीन होते हुए भी उसे सम्बल प्रदान करने के लिए पर्याप्त है।

नौकरी तलाश से लौटते समय वह गलती से जनरल की जगह फर्स्ट क्लास के डिब्बे में चढ़ जाती है जहाँ उसकी मुलाकात आभूषणों का व्यापार करने वाली भद्र महिला अंजना वासवानी से होती है। वह नमिता के भय को भाँप जाती है और जब उसे पता चलता है कि नमिता नौकरी की तलाश में है तो वह उसे अपना कार्ड थमाते हुए यह कह कर विदा करती है कि उसे जब आवश्यकता हो तो वह आ सकती है। अंत में नमिता को वह अपने यहाँ उसे लिपिकीय कार्य के लिए रखती है जिसके साथ-साथ आभूषणों की मॉडलिंग भी करनी होती है। वह उसे ऊँचे वेतन और महँगे उपहार प्रदान करती है जिस पर वह नमिता की हैरानी व्यक्त करने पर कहती है कि यह एडवांस है बाद में काट लिया जाएगा वह आभूषणों की मॉडलिंग के सन्दर्भ में शहर से बाहर भेजती है जहाँ वह सजं य कनोई के सम्पर्क में आती है वह उसे आभूषण डिजाइनिंग के विशेष पाठ्यक्रम के लिए हैदराबाद भेजती है किंतु हैदराबाद जाने से पूर्व ही उसके पिता की मृत्यु हो जाती है। मैडम वासवानी द्वारा बनाये गये तिलिस्म और सजं य कनोई के प्रेम जाल में फँसकर नमिता गर्भवती हो जाती है। निःसन्तान सजं य कनोई की खुशी का कोई ठिकाना नहीं रहता वह नमिता पर इस दुनियाँ में बच्चे को लाने का दबाव बनाता है जिस पर नमिता भी मान जाती है किंतु अन्ना साहब की मृत्यु का समाचार सुनकर नमिता का गर्भपात हो जाता है। जब यह समाचार सजं य कनोई सुनता है तो वह आगबबूला हो जाता है वह मानता है कि अपने कैरियर के लिए तथा अपने क्लास के साथी से मिलकर नमिता ने गर्भपात करवाया है। अपने क्रोध में आकर वह नमिता के सामने सारे राज उगल देता है कि अंजना वासवानी और गौतमी संजय कनोई के एजेंट के रूप में ही कार्य कर रहीं थी वह उसके पीछे इतना धन इसलिए बर्बाद कर रहा था क्योंकि उसे उसकी कुँआरी कोख से संतान चाहिए थी उसकी नौकरी इसी सोची विचारी योजना की षड्यंत्र थी। यह सुनकर नमिता पाण्डेय के पैरों तले की जमीन खिसक गयी उसे समता और प्रेम के सारे आश्वासन अन्ततः पुरुष वर्चस्व और उपभोग की आकांक्षा में ढलते दिखाई दिये। सारे सामाजिक प्रतिरोध के बावजूद एक विवाहित पुरुष से प्रेम और विवाह का निर्णय उसका अपना था। नमिता को अपने निर्णय पर पश्चाताप होता है उसे अपने प्रेम से मोहभंग होता है बिना किसी दुविधा के वह मजदूर

आंदोलन से जुड़ने का दृढ़ निश्चय करती है और अपनी प्रतिच्छाया हर्षा से जिस जगह मिलने की बात करती है वह स्थान कोई और नहीं
किशोरीबाई की खोली है।^{१७४}

इस उपन्यास में कई कथाएँ उपकथाएँ एवं चरित्र हैं। इसमें एक चरित्र मुँहफट दलित नेता पवार का है जो कड़क मिजाज, स्पष्टवादी, प्रतिबद्ध मजदूर नेता और परोपकारी व्यक्तित्व का है। नमिता के प्रति उसका आकर्षण है वह नमिता से विवाह करना चाहता है। नमिता की माँ भी इस पर कोई आपत्ति नहीं करती पर स्थितियाँ ऐसी होती हैं कि दोनों का मिलन नहीं हो पाता। दूसरा चरित्र नमिता की माँ का है जाँ अपनी छोटी बहन कुंती की समृद्धि से इस कदर आक्रान्त रहती है कि अपने बच्चों से ज्यादा तरजीह उस परिवार को देती है। यहाँ तक कि पुराना पानदान जो उसकी दादी की शादी में मिला था और सोने की करधनी जो नमिता की दादी ने नमिता की शादी के लिए रखा था। दोनों अपनी बहन को दे देती तीसरा चरित्र शाहवने का है जो गाँधीवादी विचारधारा से ओतप्रोत समाज सेविका और सादगी की प्रतिमूर्ति है वं श्रमजीवा नामक सामाजिक संस्था का सचिव बन करती है, जिसमें शोषित, प्रताड़ित और जरूरतमंद स्त्रियाँ पापड़ बेलकर अपनी रोटी का जुगाड़ करती हैं। चौथा चरित्र सुनन्दा का जो मजदूर किशोरी बाई की पुत्री है। सुनन्दा मुस्लिम युवक सुहैल से प्रेम करती है वह गर्भवती हो जाती है किंतु साम्प्रदायिक कट्टरता के कारण वह विवाह नहीं हो पाता सुनन्दा अविवाहित स्थिति में ही पुत्री का जन्म देती है और ऑनर किलिंग के तहत उसकी हत्या हो जाती है। उपन्यास की एक पात्र स्मिता है जो मटकाकिंग की पुत्री है। मटका किंग शराब के नशे में अपनी ही बड़ी बेटी से बार-बार दुराचार करता है जिसके कारण वह कईबार गर्भवती हो जाती है उसकी मृत्यु के बाद स्मिता अपनी सहेली नमिता को बताती है कि उसने ही अपने पिता को सीढ़ियों से धक्का देकर मार डाला। उपन्यास के बीच-बीच में एक चरित्र हर्षा बार-बार प्रगट होती है जाँ वस्तुतः नमिता की ही कल्पित प्रतिछाया है। हर्षा के साथ हुए सब कुछ नमिता के अंतर्द्वन्द्व को रेखांकित करते हैं। उपन्यास आवां में अन्ना साहब, दुलारीबाई, अंजना वासवानी, शिद्धार्थ सजं य कनोई आदि अनेक पात्र हैं जिनके द्वारा उपन्यास का कथानक विस्तार पाता है। आवां उपन्यास का प्रतिपाद्य विषय है मजदूर राजनीति के अन्तर्विरोध, प्रतिद्वन्द्विता के साथ पूँजीपति वर्ग का

शोषण, आपसी वैमनस्य, पैसे की ताकत सब कुछ नहीं खरीद सकती, छल-छद्म और निकृष्ट हथकण्डों को बचे ताकी से अपनाना आदि। उपन्यास में स्त्रियों में प्रतिचिन्ता, सर्वेदनशीलता और सतर्कता है। इस उपन्यास में घर, परिवार, समाज की दुरावस्थाओं, समस्याओं विसंगतियों और विद्रूपताओं को संस्पर्श करने की सतत् चेष्टा है। आवां की भाषा जीवंत और प्रवाह पूर्ण है। आवां एक महत्त्वपूर्ण मजदूर जीवन का उपन्यास है। गिलिगडु गिलिगडु वर्ष 2000 में प्रकाशित चित्रा मुद्गल का सबसे छोटा एवं तीसरा उपन्यास है। यह आकार में छोटा किंतु अत्यन्त सर्वेदनशील उपन्यास है। यह उपन्यास एक सवे निवृत्ति बुजुर्ग की कहानी है। इसमें जीवन के बहुआयामी रंग उभरकर सामने आये हैं। यह उपन्यास तेरह दिन की कहानी में दो बुजुर्गों के जीवन का पूरा खाका ही नहीं बताता अपितु आज के बदलते जीवन मूल्यों को भी परिभाषित करता है कि कैसे नौजवान पीढ़ी अपने बुजुर्गों को घर में सम्मान न देते हुए अकेला छोड़ देती हैं। यह उपन्यास इस बात की पुष्टि करता है कि साहित्यिक मूल्यों में सामाजिक सार्थकता का महत्त्व हमेशा बना रहेगा। जीवन में छोटी-छोटी परेशानियों से पार पाने के लिए रचनात्मक रास्ते की अनूठी तलाश जरूरी है। इस उपन्यास ने इसे पूरा किया है।

यह उपन्यास में रिटायर्ड इंजीनियर बाबू जसवन्त सिंह जो अपने इकलौते बेटे के पास दिल्ली रहने आये हैं तथा उन्हें सैर पर मिलने वाले मित्र कर्नल स्वामी की कथा कर्नल स्वामी पिछले कुछ दिनों से टहलने नहीं आ रहे थे ऐसे करते हुए उन्हें तेरह दिन बीत जाते हैं 'तेरहवें दिन बाबू जसवन्त सिंह उनके बताये गये पते पर पहुँचते हैं तो उन्हें पता चलता है कि उनकी मृत्यु हो चुकी है और आज उनकी तेरहवीं है। बाबू जसवन्त सिंह वर्तमान और अतीत में भटकते हुए अपने गाँव के दिनों, वर्तमान दिल्ली प्रवास के दिनों और कर्नल स्वामी के साथ बिताये गये दिनों के बारे में जिस त्रासद और सुखद अनुभव से गुजरते हैं इस उपन्यास में चित्रा जी ने उसे ही बड़े संवेदात्मक ढंग से उकेरा है, इसके माध्यम से उन्होंने तेजी से बदलते हुए जीवन मूल्यों के बीच उपेक्षित होते बुजुर्गों की व्यथा को कही है। उपन्यास में कर्नल स्वामी और बाबू जसवन्त सिंह दोनों का व्यक्तित्व अलग-अलग है जहाँ जसवन्त बाबू सकंठेची और अन्तर्मुखी हैं वहीं कर्नल स्वामी जिन्दादिल और जिजीविषा से भरपूर व्यक्ति हैं। उन्होंने त्रासदी को झले ने का जीवन दर्शन विकसित कर लिया है, जिससे वे अणिमादास की कविता के रूप में उपस्थित नहीं हैं फिर भी स्मृतियों

के जसवन्त सिंह को सौंप जाते हैं। परूँ उपन्यास में वे स्वयं कही माध्यम से संपूर्ण उपन्यास में छाये हुए हैं। कर्नल स्वामी का व्यक्तित्व इतना सशक्त है कि उपन्यास पढ़ने के बाद हर मुस्कराते हुए बुजुर्ग में कर्नल स्वामी नजर आने लगते हैं। दूसरी तरफ बाबू जसवन्त सिंह का व्यक्तित्व है माननीय कमजोरियों और खूबियों से भरे हुए एकदम अकृत्रिम सजीव पात्र यह वे अपने ही पुत्र के घर में दयनीय अवस्था में रहते हैं जो दया और सहानुभूति के पात्र यह यहाँ पर जसवन्त सिंह का जीवन बिल्कुल यथार्थ है और कर्नल स्वामी का आदर्श जिससे यथार्थ को अर्थात् जसवन्त सिंह को प्रेरणा मिलती है कि सब ठीक वही है जो प्रेम और लगाव के साथ जिया जाये। इसका कारण कुछ उन्हें अकेलेपन का भय और कुछ नरेन्द्र के बचपन के साथ जो नहीं खेल पाये थे उसके बेटे के रूप में उसके बचपन से खेलने की लालसा उन्हें बेटे के पास खींच लाती है। किंतु दिल्ली पहुँच कर उनके रहने का इतना जाम बालकनी में किया जाता है इससे उनका मन कड़वा जाता है। शीघ्र उन्हें पता चल जाता है कि उनके महानगरीय बेटे और बहू के लिए उनकी भावनाओं की कोई परवाह नहीं है उन्हें बार—बार पश्चाताप होता है कि “क्यों वे इस घर को अपना घर समझने की भूल कर बैठते हैं, जबकि उन्हें दसियों बार, दसियों तरह से समझाया जा चुका है कि वे अपने काम से काम तक सीमित रहे।” महानगरीय परिवेश के बच्चों के मन में भी इस विचारधारा का बीजारोपण किया जा रहा है कि अपने काम तक सीमित रहे उन्होंने किसी की जरूरत नहीं है किंतु इस समझदारी से केवल रिस्ते ही क्षत विक्षत हो रहे हैं। यह उपन्यास केवल वृद्ध जनों की भावनाओं का निरादर और उनका अपमान ही उजागर नहीं करता बल्कि सर्वोदना के क्षरण की गम्भीर चिन्ता और समस्या प्रमुख हो उठती है, “ बुद्धि विकास की आड़ में बच्चों की सर्वोदना नष्ट किया जा रहा है कितना कि बच्चे कभी परिवार में न लौट सकें, न कभी अपना परिवार गढ़ सकें। घर परिवार की भावना का ध्वस्त होना एक बड़ी दुर्घटना है, इसकी भरपाई किसी किस्म की सम्पन्नता से संभव नहीं है। ”⁽⁴⁾ कभी—कभी जसवन्त सिंह का लगता है कि उस घर में एक नहीं दो कुत्ते हैं एक टॉमी जिसकी वजह से सोसाइटी में इस घर की हैसियत बढ़ती है दूसरा वह स्वयं जिससे उस घर की हैसियत कम होती है। फिर उस कलंकित को कोई अक्षत चंदन क्यों चढ़ाये। जसवन्त सिंह कई कटु अनुभवों से गुजरते हैं जो कि वृद्धजनों के लिए सहज है। ‘परिवेश बोध’ और ‘जन धर्मिता’ को उपन्यास विद्या में अन्य विधाओं से अधिक जरूरी और संश्लिष्ट

माना गया है । गिलिगडु में परिवेश बोध अभिव्यक्ति चरित्रों के अर्जित अनुभवों और उनकी प्रति उनकी होता है कि जसवन्त सिंह अंत में बटे को छोड़ जाते हैं और सुनगुनिया को अपना लेते हैं ।

यह उपन्यास कर्नल स्वामी के तेरह दिन की गैर मौजूदगी पर आधारित है वास्तव में यह तेरह दिन 1— पुत्र के संबंधों में जीवन्तता की गैर मौजूदगी का समानान्तर अर्थ भी रखती है । कर्नल स्वामी के तर्पण पिता— के साथ ही जसवन्त सिंह का पुत्रमोह भंग होता है और वे उससे अपने संबंधों का भी तर्पण कर देते हैं इस उपन्यास का शिल्प एक बुजुर्ग मनःस्थिति के अनुरूप वर्तमान और अतीत के समन्वय से निर्मित है इसमें कहीं भी जटिलता के दर्शन नहीं होते । मात्र दो प्रमुख पात्रों के माध्यम से समाज के बदलते जीवन मूल्यों की पहचान और उसके फलस्वरूप समाज में बुजुर्गों की स्थिति का उद्घाटन करने के लिए चित्रा मुद्गल ने जिस शिल्प की खोज की है वह अपने आपमें बजे ढेड़ है । इनके प्रत्येक उपन्यास शैलिक दृष्टि से अपना विशेष स्थान रखते हैं । इस उपन्यास में चित्रा जी एक नये अनुभव को पाठकों के बीच लाती हैं । वृद्धों की समस्याओं पर पिछले दिनों दो वरिष्ठ उपन्यासकारों के उपन्यास छपे हैं । 'समय सरगम' और 'अन्तिम अरण्य' । समय सरगम में कृष्णा सोवती ने वृद्धों के प्रति अमानवीय दुर्व्यवहार की चर्चा करते हुए दो बटू, विपरीत लिंगियों के समझदार साहचर्य में राहत की संभावना दर्शायी है । अन्तिम अरण्य के केन्द्र में एक सेवा निवृत्त वृद्ध पुरुष की स्मृतियाँ हैं जो उस आत्मकेन्द्रित और रहस्य रूप में प्रस्तुत करती है । ऊषा प्रियंबदा की 'वापसी' और सयू 'बाला सिंह की 'निर्वासित' कहानियों की तरह गिलिगडु का जसवन्त सिंह भी घर छोड़ने के लिए विवश है किंतु वे अत्यन्त दृढ़ और बहे द मजबूत कदमों के साथ अपने घर कानपुर लौटते हैं ।

उपन्यास 'गिलिगडु' के प्रमुख पात्र जसवन्त सिंह अपनी पत्नी की मृत्यु के बाद अपने बेटे नरेन्द्र के यहाँ रहने दिल्ली जाते हैं । सहज प्रतिक्रियाओं के रूप में है । इस उपन्यास में अवमूल्यों, अपमान, निरादर, उदासीनता, लगाव का छोटा सा ससंसार बहुत भला और एक विकल्प जैसा लगता है । इसमें जब हमें ये पता चलता है कि कर्नल स्वामी का अपना गढ़ा हुआ राज्य है तो यथार्थ की निर्ममता न केवल जसवन्त सिंह बल्कि हमें भी अन्दर तक हिला देती है । कहानी में कर्नल स्वामी की मौजूदगी प्रतिकूल परिस्थितियों में वृद्ध जनो के

लिए सांत्वना सरीखी है। कर्नल स्वामी का ही प्रभाव है कि जसवन्त सिंह अपनी वसीयत को पुनः लिखना चाहते हैं वं अपनी महरी सुनगुनिया के बच्चों को पढ़ाना लिखाना ही जीवन का उद्देश्य बना लेते हैं। अपने पुत्र के व्यवहार से उनके मन में इतनी कचोट होती है कि वं उसे अपने दाह संस्कार के अधिकार से वंचित करने का सकंल्प ले लेते हैं। उनकी इस तेजस्वी निर्णयात्मकता में उपन्यास के 'कथ्य' को न केवल वैचारिक दीप्ति दी है अपितु कल्पती – रिरियाती बुढ़ौती के लिए जिजीविषा सम्पन्न सन्देश देकर सकरात्मकता का निर्माण किया है। गिलिगडु का अर्थ हैकृ– 'चिड़ियाँ जो कि मलयालम भाषा का शब्द हैं मलयालम का सही शब्द है 'किलिकलु'। कर्नल स्वामी ने उसका हिंदी रूपांतरण कर दिया है। वं अपनी पौत्रियों को गिलिगडु कहते हैं। और उनकी काल्पनिक चह – चहाहट में रसमग्न रहते हैं। जसवन्त सिंह अपनी बची हुई जिंदगी सुनगुनिया के बच्चियों के साथ बिताना चाहते हैं। जिस चह – चहाहट को वं कानपुर में छोड़ आये थे उसे फिर से कानपुर लौट कर महसूस करना चाहते हैं। उपन्यास इसी मुक्ति के अहसास के साथ खत्म होता है।

पोस्ट वाक्स नं. 203 नाला सोपारा सामान्य मनुष्यों से जुड़ी असमान्य कहानी लिखने वाली चित्रा मुद्गल जब कुछ नया लिखती है तो उसे पढ़ने की ललक मन में समा जाती है। उनकी कहानियों और उपन्यासों के किरदार हमारे आस-पास से गुजरते हैं। 2018 के लिए साहित्य अकादमी पुरस्कार से नवाजा गया उपन्यास 'पोस्ट वाक्स नं. 203 नाला सोपारा' इसी श्रेणी का उपन्यास है। यह उपन्यास पत्र व्यवहार शैली में लिखा गया है। इस उपन्यास की रचना बड़े सलीके से की गई है, इसका विषय वर्तमान सामाजिक विडम्बना है जो किसी रोचक पठनीयता के साथ पाठक को बाँधे रखता है। इस उपन्यास में घर से बहिष्कृत किन्नर – संतान विन्नी उर्फ विनोद उर्फ विमली

स्वयं अपनी माँ बन्दना को पत्र लिखता है। विन्नी को माँ वन्दना को लिखे पत्र में उसके भोगे हुए यथार्थ की निजता के साथ दुनिया के सबसे प्यारे और संवदेनशील रिस्ते (माँ-बेटे) को सामाजिक दबाव की वजह से मजबूर न छोड़ने की पीड़ा का दंश उभरता है। इस पीड़ा को अभिव्यक्त करने के लिए चित्रा जी ने अचूक वाण पत्र शैली को चुना है जिसमें

विन्नी उर्फ विमली के मन की ग्रन्थियाँ एक के बाद एक खुलती चली जाती हैं। इस उपन्यास में डाक तार विभाग की तकनीकी विधान का प्रयोग हुआ है 'पोस्ट बॉक्स नं.

203 । आज जब पत्र लिखना बिल्कुल बंद सा हो गया है पत्र का स्थान वाट्सअप, ट्वीटर, इंस्टाग्राम ने ले लिया है तो चित्रा जी ने पत्र में पिरोई गई सवेदना, और कुछ शब्दों द्वारा अपनी पीड़ा की अभिव्यक्ति को इस उपन्यास द्वारा पिरोया है। हमारे देश से सती प्रथा, बाल विवाह, छठू-छतू जैसी अनेक रूढ़ियाँ दूर हुई हैं लेकिन किन्नरों की जिंदगी में आज भी काई परिवर्तन नहीं आया है पोस्ट बॉक्स नं. 203 नाला सोपारा किन्नरों की जिंदगी के विमर्श का एक सशक्त उपन्यास है। यह जोरदार तरीके से वकालत करता दिखता है कि किन्नरों को भी अपनी जिंदगी जीने ब्रत त्यौहार, मंदिरों आदि में प्रवेश करने का अधिकार होना चाहिए । लेकिन इस (लिंग पजू के समाज) ने लिंग विहीन कहकर उन्हें अपने से अलग कर दिया है जा उनकी दुर्दशा का कारण है। चित्रा जी कहती है कि उन्हें अपने बच्चे के मुंडन छेदन में किन्नरों के आशिर्वाद की जरूरत होती है किंतु अगर ट्रेन में, बस में वे दिख जाते हैं तो मुँह बिदका लेते हैं। चित्रा जी सवाल करती है बिन्नी के द्वारा इस समाज से कि बिन्नी अपनी प्राणों से प्रिय माँ को चिट्ठियाँ क्यों लिखता है और माँ अपने जिगर के टुकड़े के पत्रों का छुप-छुप कर जबाब क्यों देती है । समाज द्वारा थोपी कई इस दूरी का न चाहते हुए भी बिन्नी और उसकी 'बा' मानने के लिए अभिशप्त हैं । 'बा' ने विनोद की परवरिश एक आम बच्चे की तरह ही करने का प्रयास किया है। बचपन में वह वहे द होशियार था उसके भी सपने थे किंतु उसे परिवार से दूर हिजड़ों के साथ रहने के लिए मजबूर कर दिया जाता है। वह बिमली बन जाता है किंतु अपने मूल्यों को अपने आप में जिन्दा रखता है। अपने जीवन के उतार चढ़ाव के पल-पल की जानकारी अपनी माँ को चिट्ठियों के माध्यम से देता है। माँ का जो जबाब आता है उससे भी उसे मासिक सत्रास से जूझना पड़ता है। अपनी जिंदगी में तमाम परेशानियों के बावजूद उसकी महत्वाकांक्षा है कि जिंदगी में कुछ बनकर समाज में सम्मान की जिंदगी जी सके। इसीलिए वह हर विषम परिस्थिति में भी अपनी पढ़ाई जारी रखता है। वह अपने समाज के लोगों को सम्मानित जिंदगी दिलाना चाहता है । इसीलिए विधायक जी के सम्पर्क में आने के बाद अपने समाज का प्रतिनिधित्व करता हुआ वह भाषण देता है किंतु उसके आस-पास बहुत ही राजनीति है जो क्रूरता की पराकाष्ठा तक पहुँच जाती । पर वह

इन सबके बीच सँ ही रास्ता निकालने के लिए दृढ़ निश्चय करता है। उसकी बा उसँ लेकर आशंकित है यह गम उन्हें सालता है कि उन्होंने अपने बच्चे को क्यों अपने से अलग होने दिया । विनोद की जिंदगी बदलते-बदलते रह जाती है जिस खुशनुमा जिंदगी की उसने चाह की थी वह राजनीतिक दलदल में फँस जाती है । उपन्यास के अंत में विनोद की माँ द्वारा बेटे की वापसी के लिए समाचार पत्र में दिया गया इश्तिहार कहीं न कहीं इस समाज में किन्नरों के प्रति एक उम्मीद जगाती है।

अध्याय

—2

आधुनिकता

बोध का

आशय एवं

स्वरूप

आधुनिकता की परिभाषाएँ एवं बोध विशेषताएँ चूँकि “आधुनिक” शब्द का उपयोग विभिन्न अवधियों का वर्णन करने के लिए किया जाता है, इसलिए आधुनिकता की किसी भी परिभाषा में प्रश्न के संदर्भ को ध्यान में रखा जाना चाहिए। इतिहास को तीन बड़े युगों में विभाजित करने के संदर्भ में, आधुनिक का अर्थ मध्यकालीन यूरोपीय इतिहास के बाद का संपूर्ण अर्थ हो सकता है: पुरातनता, मध्यकालीन और आधुनिक। इसी तरह, इसका उपयोग अक्सर यूरो-अमेरिकी संस्कृति का वर्णन करने के लिए किया जाता है जहाँ ज्ञानोदय से उत्पन्न हुई और किसी तरह वर्तमान में भी जारी है। “आधुनिक” शब्द 1870 और 1910 के बीच से शुरू होकर वर्तमान तक की अवधि के लिए भी लागू होता है, और इससे भी अधिक विशेष रूप से 1910–1960 की अवधि के लिए।

“प्रारंभिक आधुनिक” शब्द का एक आम उपयोग पश्चिमी इतिहास की स्थिति का वर्णन करने के लिए किया जाता है, या तो 1400 के दशक के मध्य से, या मोटे तौर पर चल प्रकार और प्रिटिंग प्रसे की यूरोपीय खोज, या 1600 के दशक की शुरुआत से, जो कि उत्थान से जुड़ी अवधि थी। ज्ञानोदय परियोजना का इन अवधियों की विशेषता इस प्रकार हो सकती है:

राष्ट्र राज्य का उदय राजनीतिक और सामाजिक विश्वास के रूप में सहिष्णुता का विकास औद्योगीकरण व्यापारिकता एवं पूंजीवाद का उदय गैर-पश्चिमी दुनिया की खोज और उपनिवेशीकरण प्रतिनिधि लोकतंत्र का उदय विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी की बढ़ती भूमिका शहरीकरण जन साक्षरता जनसंचार माध्यमों का प्रसार कार्टेशियन और कांतीयन स्वायत्त कारणों से परंपरा पर अविश्वास करते हैं। इसके अलावा, 19वीं सदी को आधुनिकता में निम्नलिखित पहलू जोड़ने वाला कहा जा सकता है:

- सामाजिक विज्ञान और मानव विज्ञान का उद्भव
- स्वच्छंदतावाद और प्रारंभिक अस्तित्ववाद

- कला और वर्णन के प्रति प्रकृतिवादी दृष्टिकोण
- भूविज्ञान, जीव विज्ञान, राजनीति और सामाजिक विज्ञान में विकासवादी सोच
- आधुनिक मनोविज्ञान की शुरुआत
- धर्म के प्रति बढ़ती अरुचि
- मुक्ति
- आधुनिकता की विशेषताओं को परिभाषित करना आधुनिकता क्या है, यह समझने के लिए, विशेष रूप से समाजशास्त्र के क्षेत्र में, कई प्रयास किए गए हैं। समाज, सामाजिक जीवन, प्रेरक शक्ति, लक्षणात्मक मानसिकता या आधुनिकता के कुछ अन्य परिभाषित पहलुओं का वर्णन करने के लिए विभिन्न प्रकार के शब्दों का उपयोग किया जाता है। वे सम्मिलित करते हैं:

नौकरशाही — अवैयक्तिक, सामाजिक पदानुक्रम जो श्रम विभाजन का अभ्यास करते हैं और विधि और प्रक्रिया की नियमितता द्वारा चिह्नित होते हैं दुनिया से मोहभंग — जीवन और संस्कृति के सभी पहलुओं की पवित्र और आध्यात्मिक समझ का नुकसान

युक्तिकरण— दुनिया को वस्तुनिष्ठ रूप से सुलभ सिद्धांतों और डेटा की एक उचित और तार्किक प्रणाली के माध्यम से समझा और प्रबोधित किया जा सकता है धर्मनिरपेक्षीकरण— सामाजिक स्तर पर धार्मिक प्रभाव और ध्या धार्मिक विश्वास की हानि अलगाव — व्यक्ति का अर्थ की प्रणालियों से अलगाव — परिवार, सार्थक कार्य,

धर्म, वंश, आदि।

वस्तुकरण— जीवन के सभी पहलुओं को मौद्रिक उपभोग और विनिमय की वस्तुओं तक सीमित कर देना डिस्कॉन्टेक्सटलाइजेशन—सामाजिक प्रथाओं, विश्वासों और सांस्कृतिक वस्तुओं को उनकी मूल स्थानीय संस्कृतियों से हटाना

व्यक्तिवाद — परिवार, कबीले, अकादमी, गांव, चर्च जैसी ध्यान संरचनाओं के विपरीत व्यक्तियों पर बढ़ता तनाव राष्ट्रवाद— तर्कसंगत केंद्रीकृत सरकारों के रूप में आधुनिक राष्ट्र—राज्यों का उदय जो अक्सर स्थानीय, जातीय समूहों को पार करते हैं

शहरीकरण— लोगो, सांस्कृतिक केंद्रों और राजनीतिक प्रभाव का बढ़े शहरों में स्थानांतरण

व्यक्तिवाद — सत्य और अर्थ की परिभाषाओं और मूल्यांकन के लिए अंदर की ओर मुड़ना
रैखिक—प्रगति — तर्क के उन रूपों को प्राथमिकता जाँ पवूँधारणाओं और प्रस्तावों की
परिणामी श्रृंखलाओं पर जोर देते हैं

वस्तुनिष्ठवाद— यह विश्वास कि सत्य—दावे को सभी के लिए सुलभ स्वायत्त जानकारी द्वारा
स्थापित किया जा सकता है सार्वभौमिकता— स्थानीय भेदों की परवाह किए बिना सभी संस्कृ
तियों परिस्थितियों में विचारों दावों का अनुप्रयोग

न्यूनीकरणवाद— यह विश्वास कि किसी चीज को उसके घटकों का अध्ययन करके समझा
जा सकता है जनसमाज — जनसंचार माध्यमों द्वारा एकजुट समाजों का विकास और
स्थानीय और क्षेत्रीय संस्कृति विशिष्टताओं के विपरीत सांस्कृतिक प्रथाओं का व्यापक प्रसार
औद्योगिक समाज— औद्योगिक उत्पादन और उत्पादों के वितरण के आसपास गठित समाज
समरूपीकरण— सामाजिक ताकतें जो सांस्कृतिक विचारों और उत्पादों की एकरूपता की
ओर प्रवृत्त होती हैं

लोकतंत्रीकरण— स्वतंत्र चुनाव, स्वतंत्र न्यायपालिका, कानून का शासन और
मानवाधिकारों के सम्मान की विशेषता वाली राजनीतिक प्रणालियाँ मशीनीकरण— उत्पादन
के साधनों को मानव श्रम से यंत्रीकृत, उन्नत प्रौद्योगिकी में स्थानांतरित करना
अधिनायकवाद— निरंकुश केंद्रीय सरकारें जो स्वतंत्र अभिव्यक्ति और राजनीतिक असहमति
को दबाती हैं, और जो अपने नागरिकों के प्रचार और उपदेश का अभ्यास करती हैं

चिकित्सीय प्रेरणाएँ — यह समझ कि मानव स्वयं विकासवादी इच्छाओं का एक उत्पाद है
और नैतिक सुधार या सार्वजनिक सद्गुणों की खोज की परियोजनाओं के विपरीत उन
इच्छाओं को प्राप्त करने में स्वयं की सहायता की जानी चाहिए आधुनिकता की विशेषता
अक्सर आधुनिक समाजों की तुलना पूर्व—आधुनिक या उत्तर—आधुनिक समाजों से की
जाती है, और उन गैर—आधुनिक सामाजिक स्थितियों की समझ, फिर से, एक सुलझा हुआ
मुद्दे से बहुत दूर है। एक हद तक, एक वर्णनात्मक अवधारणा की संभावना पर सदेह
करना उचित है जो विभिन्न ऐतिहासिक संदर्भों, विशेष रूप से गैर—यूरोपीय संदर्भों के

समाजों की विविध वास्तविकताओं को पर्याप्त रूप से पकड़ सकता है, पूर्व-आधुनिकता से उत्तर-आधुनिकता तक सामाजिक विकास के तीन-चरण मॉडल की तो बात ही छोड़ दे। जैसा कि कोई ऊपर देख सकता है, अक्सर प्रतीत होने वाली विपरीत ताकतों (जैसे कि वस्तुवाद और व्यक्तिवाद, व्यक्तिवाद और राष्ट्रवाद, लोकतंत्रीकरण और अधिनायकवाद) को आधुनिकता के लिए जिम्मेदार ठहराया जाता है, और शायद इस बात पर बहस करने के कारण हैं कि प्रत्येक आधुनिक दुनिया का परिणाम क्यों है। उदाहरण के लिए, सामाजिक संरचना के सदंर्भ में, ऊपर सचूीबद्ध कई परिभाषित घटनाएँ और विशेषताएँ अपेक्षाकृत पृथक स्थानीय समुदायों से अधिक एकीकृत बड़े पैमाने के समाज में संक्रमण से उत्पन्न होती हैं। इस तरह से समझें तो, आधुनिकीकरण एक सामान्य, अमूर्त प्रक्रिया हो सकती है जो यूरोप में एक अनोखी घटना के बजाय इतिहास के कई अलग-अलग हिस्सों में पाई जा सकती है।^{१४} सामान्य तौर पर, बड़े पैमाने पर एकीकरण में शामिल हैं: पूर्व में अलग-अलग क्षेत्रों

के बीच माल, पूंजी, लोगों और सचूनाओं की आवाजाही में वृद्धि, और प्रभाव में वृद्धि जो

एक स्थानीय क्षेत्र से परे तक पहुंचती है। उन गतिशील तत्वों की औपचारिकता में वृद्धि, 'सर्किट' का विकास जिस पर वे तत्व और प्रभाव यात्रा करते हैं, और सामान्य रूप से समाज के कई पहलुओं का मानकीकरण जो गतिशीलता के लिए अनुकूल है। समाज के विभिन्न वर्गों की विशेषज्ञता में वृद्धि, जैसे श्रम का विभाजन, और क्षेत्रों के

बीच परस्पर निर्भरता। आधुनिकता से जुड़ी प्रतीत होने वाली विरोधाभासी विशेषताएँ अक्सर

इस प्रक्रिया के

विभिन्न पहलू हैं। उदाहरण के लिए, व्यंजनों, लोककथाओं और हिट गीतों जैसे सांस्कृतिक तत्वों की बढ़ती गतिशीलता के कारण अद्वितीय स्थानीय संस्कृति पर आक्रमण होता है और वह लुप्त हो जाती है, जिसके परिणामस्वरूप सभी इलाकों में एक सांस्कृतिक समरूपीकरण होता है, लेकिन एक क्षेत्र के भीतर उपलब्ध व्यंजनों और गीतों का भंडार बढ़ जाता है। अंतर्संस्थानीय आवाजाही में वृद्धि हुई, जिसके परिणामस्वरूप प्रत्येक इलाके में विविधता आई। (यह विशेष रूप से बड़े महानगरों में प्रकट होता है जहां कई गतिशील तत्व होते

हैं)। केंद्रीकृत नौकरशाही और सरकारों और फर्मों का पदानुक्रमित संगठन अभूतपूर्व तरीके से पैमाने और शक्ति में बढ़ता है, जिससे कुछ लोग आधुनिक समाज की दमघोटी, टंडी, तर्कवादी या अधिनायकवादी प्रकृति पर विलाप करते हैं। फिर भी व्यक्ति, अक्सर प्रतिस्थापन योग्य घटकों के रूप में, उन सामाजिक उप-प्रणालियों में आगे बढ़ने में सक्षम हो सकते हैं, जिससे दूसरों के लिए स्वतंत्रता, गतिशील प्रतिस्पर्धा और व्यक्तिवाद की भावना पैदा होती है। यह विशेष रूप से तब होता है जब एक आधुनिक समाज की तुलना पूर्व-आधुनिक समाजों से की जाती है, जिसमें परिवार और सामाजिक वर्ग जा पैदा होता है वह काफी हद तक उसके जीवन-क्रम को आकार देता है।^{१२६}

हालाँकि, साथ ही, आधुनिकता की ऐसी समझ निश्चित रूप से कई लोगों के लिए सतं षेजनक नहीं है, क्योंकि यह पुनर्जागरण के बाद से पश्चिमी यूरोपीय और अमेरिकी समाजों के वैश्विक प्रभाव को समझाने में विफल है। पश्चिमी यूरोप को किस चीज ने इतना खास बना दिया है?

इस प्रश्न के दो प्रमुख उत्तर आये हैं। सबसे पहले, एक आंतरिक कारक यह है कि केवल यूरोप में, पुनर्जागरण मानवतावादियों और प्रारम्भिक आधुनिक दार्शनिकों और वैज्ञानिकों के माध्यम से, तर्कसंगत सोच ने कई बौद्धिक गतिविधियों को प्रतिस्थापित कर दिया जो सम्मेलन, अंधविश्वास और धर्म के भारी प्रभाव में थे। उत्तर की यह पंक्ति सबसे अधिक बार समाजशास्त्री मैक्स वेबेर से जुड़ी है, जो उपरोक्त प्रश्न का उत्तर खोजने के लिए जाने जाते हैं। दूसरा, एक बाहरी कारक यह है कि उपनिवेशवाद, जो कि खोज के युग से ही शुरू हुआ, ने यूरोपीय देशों और उनके उपनिवेशों के बीच शोषणकारी संबंध बनाए।

यह भी उल्लेखनीय है कि एकल परिवार, दासता, लिंग भूमिकाएँ और राष्ट्र राज्यों जैसी कई आधुनिक समाजों की आम तौर पर देखी जाने वाली विशेषताएँ तर्कसंगत सामाजिक संगठन के विचार के साथ अच्छी तरह से फिट नहीं होती हैं जिसमें लोगों जैसे घटकों के साथ समान व्यवहार किया जाता है। हालाँकि इनमें से कई विशेषताएँ विघटित हो रही हैं, इतिहास बताता है कि वे विशेषताएँ आधुनिकीकरण की आवश्यक

विशेषताओं का अपवाद मात्र नहीं हो सकती हैं, बल्कि इसके आवश्यक भाग भी हो सकती हैं।

आशा के रूप में आधुनिकता, विनाश के रूप में आधुनिकता आधुनिकीकरण ने लोगों के लिए निर्विवाद रूप से अनेक लाभ लाए हैं। शिशु मृत्यु दर में कमी, भूख से मृत्यु में कमी, कुछ घातक बीमारियों का उन्मूलन, विभिन्न पृष्ठभूमि और आय वाले लोगों के साथ अधिक समान व्यवहार, इत्यादि। कुछ लोगों के लिए, यह आधुनिकता की क्षमता का सकं-
त है, जिससे शायद अभी तक पूरी तरह से महसूस नहीं किया जा सका है। सामान्य तौर पर, समस्याओं के प्रति तर्कसंगत, वैज्ञानिक दृष्टिकोण और आर्थिक धन की खोज अभी भी कई लोगों को अच्छे सामाजिक विकास को समझने का एक उचित तरीका लगता है।^{१४}

साथ ही, समाजशास्त्रियों और अन्य लोगों द्वारा आधुनिकता के कई अंधेरे पक्ष बताए गए हैं। तकनीकी विकास न केवल चिकित्सा और कृषि क्षेत्रों में हुआ, बल्कि सेना में भी हुआ। द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान हिरोशिमा और नागासाकी पर गिराए गए परमाणु बम और युद्ध के बाद के युग में निम्नलिखित परमाणु हथियारों की होड़ को कुछ लोगों द्वारा प्रौद्योगिकियों के खतरे के प्रतीक के रूप में माना जाता है, जिससे मनुष्य बुद्धिमानी से सभालने में सक्षम हो भी सकता है और नहीं भी। स्टालिन के ग्रेट पर्ज और होलोकॉस्ट (या शोआह) को कुछ लोगों द्वारा सकं-त के रूप में माना जाता है कि किसी समाज की तर्कसंगत सोच और तर्कसंगत संगठन में गैर-मानक तत्वों का बहिष्कार, या विनाश शामिल हो सकता है।

पर्यावरणीय समस्याएँ आधुनिकता के अंधेरे पक्ष में एक और श्रेणी शामिल हैं। प्रदूषण शायद इनमें से सबसे कम विवादास्पद है, लेकिन विकास के परिणामों के रूप में घटती जैव विविधता और जलवायु परिवर्तन को भी इसमें शामिल किया जा सकता है। जैव प्रौद्योगिकी और जेनेटिक इंजीनियरिंग का विकास ऐसी चीजें पैदा कर रहा है जिन्हें कुछ लोग अज्ञात जोखिमों का स्रोत मानते हैं।

इन स्पष्ट घटनाओं के अलावा, कई आलोचक आधुनिक जीवन के मनोवैज्ञानिक और नैतिक खतरों की ओर इशारा करते हैं — अलगाव, जड़हीनता की भावना, मजबूत बंधन और

सामान्य मूल्यों की हानि, सुखवाद, दुनिया से मोहभंग, इत्यादि। इसी तरह, मानव गरिमा, मानव स्वभाव की आम तौर पर सहमत परिभाषाओं की हानि और मानव जीवन में मूल्य की हानि को एक सामाजिक प्रक्रियाध्वंसम्यता के प्रभाव के रूप में उद्धृत किया गया है जो बढ़ते निजीकरण, व्यक्तिवाद, न्यूनतावाद के फल प्राप्त करता है। , साथ ही पारंपरिक मूल्यों और विश्वदृष्टिकोण का नुकसान। कुछ लोगो ने सुझाव दिया है कि आधुनिकता का अंतिम परिणाम मानवता और मनुष्य की एक स्थिर अवधारणा का नुकसान है।^{१२४}

उपर्युक्त में से अधिकांश विकिपीडिया के मुफ्त लेख से लिया गया है। वबे साइट के दर्शन के संयोजन में, मैंने स्वतंत्र रूप से सामग्री को अनुकूलित किया है, अपना खुद का जोड़ा है, और स्पष्ट श्रेय के बिना अन्य चयन हटा दिए हैं। जो कोई भी परू लेख देखना चाहता है वह यहां जा सकता है।

आधुनिक स्व की स्थितियाँ आधुनिक स्व एक स्वायत्तता मानता है जो अधिकार, परंपरा या समुदाय के दावों को अस्वीकार करना चाहता है। आधुनिक आत्मा व्यक्तिगत चिकित्सा की खोज करती है, जिसका

परिणाम केवल

कल्याण का व्यक्तिपरक अनुभव होता है। सच्चे, अच्छे और सुंदर को खोजा नहीं जा सकता,

इसलिए उन्हें मानवीय अनुभव

पर लागू नहीं माना जाता है। आधुनिक स्वत्व चरित्र के उद्धार पर जोर देने से हटकर

सामाजिक अवरोधों से

मुक्ति की ओर बढ़ गया है।

इच्छा के उत्पादों के स्व-उपभोग के माध्यम से पहचान स्व-निर्मित होती हैं पहचान और सच्चाई के बारे में ऐसे दावे पर्यावरण की तकनीकी महारत के साथ-साथ

वास्तविकता के सार्वजनिक और निजी क्षेत्रों के बीच विभाजन की मांग करते हैं।^{१२५} पश्चिमी

व्यक्तित्व की प्रकृति पर पीटर बर्जर के छह प्रस्ताव इस प्रकार, उपरोक्त को ध्यान में रखते हुए, अधिकांश पश्चिमी समाज मानव पहचान

को इस प्रकार समझता है:

- व्यक्ति की विशिष्टता उसकी आवश्यक वास्तविकता का प्रतिनिधित्व करती है।
- व्यक्ति स्वतंत्र हैं या स्वतंत्र होना चाहिए।
- व्यक्ति अपने कार्यों के लिए जिम्मेदार हैं, लेकिन केवल अपने कार्यों के लिए।
- परिभाषा के अनुसार दुनिया का एक व्यक्ति का व्यक्तिपरक अनुभव “वास्तविक” है।
- व्यक्तियों के पास सामूहिकता के ऊपर और उसके विरुद्ध कुछ अधिकार होते हैं।
- व्यक्ति स्वयं को बनाने के लिए अंततः जिम्मेदार हैं

आधुनिकता आधुनिकता शब्द आमतौर पर उत्तर-पारम्परिक, उत्तर-मध्ययुगीन ऐतिहासिक अवधि को सन्दर्भित करता है, जाँ सामन्तवाद (भू-वितरणवाद) से पूँजीवाद, औद्योगीकरण धर्मनिरपेक्षतावाद, युक्तिकरण, राष्ट्र-राज्य और उसकी घटक संस्थाओं तथा निगरानी के प्रकारों की ओर कदम बढ़ाने से चिह्नित होता है (बार्कर 2005, 444). अवधारणा के आधार पर, आधुनिकता का सम्बन्ध आधुनिक युग और आधुनिकता से है, लेकिन यह एक विशिष्ट अवधारणा का निर्माण करती है। जबकि इन्लाईटेनमेंट, पश्चिमी दर्शन में एक विशिष्ट आन्दोलन की ओर इशारा करता है, आधुनिकता केवल पूँजीवाद के उदय के साथ सम्बन्धित सामाजिक जुड़ाव को सन्दर्भित करती है। आधुनिकता, बौद्धिक संस्कृति की प्रवृत्तियों को भी सन्दर्भित कर सकती है, विशेष रूप से उन आन्दोलनों को जाँ पन्थनिरपेक्षीकरण और उत्तर-औद्योगिक जीवन के साथ जुड़े हुए हैं, जैसे कि मार्क्सवाद, अस्तित्ववाद और सामाजिक विज्ञान की औपचारिक स्थापना. इस सन्दर्भ में, आधुनिकता को 1436–1789 के सांस्कृतिक और बौद्धिक आन्दोलनों के साथ जोड़ा गया है जिसका विस्तार 1970 के दशक तक या उसके बाद तक हुआ है (तौल्मिन 1992, 3–5)

यह बहुत ही सही कहा गया है कि “आधुनिकीकरण पुरानी प्रक्रिया के लिए चालू शब्द है। यह सामाजिक परिवर्तन की वह प्रक्रिया है, जिससे कम विकसित समाज विकसित समाजों की सामान्य विशेषताओं को प्राप्त करते हैं।”

सम्बन्धित शब्द अंग्रेजी शब्द “मॉडर्न” (आधुनिक) (माडे े से बना लैटिन मोडर्नस, “बस अभी”) का प्रयोग 5 वीं शताब्दी से मिलता है, जो मूल रूप से ईसाई युग को बुतपरस्त युग से अलग करने के सन्दर्भ में है, इसके बावजूद इस शब्द का सामान्य उपयोग 17 वीं शताब्दी में ही होना शुरू हुआ जो कि क्वारल ऑफ दी एनशिऐण्ट एण्ड दी मॉडर्न्स से व्युत्पन्न हुआ था – जिसमें यह बहस की गयी थी कि: “क्या आधुनिक संस्कृति शास्त्रीय (यूनानी-रोमन) संस्कृति से बेहतर है?” – और यह बहस 1690 के दशक के आरम्भ में अकादमी फ्रान्कैस के बीच साहित्यिक और कलात्मक विवाद थी।

अध्याय

—3

लाक्षागृह कहानी संग्रह का सामान्य परिचय

लाक्षागृह कहानी संग्रह चित्रा मुद्गल समकालीन कहानी साहित्य की एसेी विरल प्रतिभा हैं जिन्होंने विगत चालीस वर्षों में निरन्तर श्रेष्ठ कथा—लेखन किया है। इसीलिए उनके खाते में इतनी यादगार उम्दा कहानियाँ हैं जो सामान्यतः कथाकारों के पास नहीं होतीं। जिन लेखिकाओं ने इस मिथ को भंजित किया है कि उनका लेखन सीमित अनुभव—वृत्त से अलग गहरी सामाजिक संपृक्ति और सरोकारों का है, उनमें चित्रा मुद्गल का स्थान अप्रतिम है। अपने कथ्य की गहराई, बनावट—बुनता (टैक्सचर) की बारीकी और इन सबके ऊपर

कथा—रस का ऋजु प्रवाह इनकी कहानियों को न केवल अनुपम बनाता है अपितु पाठक को अपना सहयात्री बनाकर उसकी सोच पर दस्तक देने का कार्य करता हुआ उसे संस्कारित करने का कार्य बहुत चुपचाप और अनजाने—से रूप में करता है, विचार को अनुभूति का अंग बनाते हुए, बिना किसी आरोपण के। ^{स्थल0} इन कहानियों का फलक बहुत व्यापक है। 'जगदम्बा बाबू गाँव आ रहे हैं' में पूरी तरह रेणु की तरह लोक में बसकर वे गाँव में फैले राजनीतिक कदाचार की बखिया उधेड़ती हैं तो 'भूख', 'चेहरे' जैसी कहानियों में समाज के निम्नतम वर्ग की 'त्रासद जिन्दगी' को सर्वदनात्मक रूप में उकेरती हैं। इससे आगे बढ़कर 'वाइफ स्वेपी' जैसी कहानी में वैश्विक गाँव की अपसंस्कृति में डूबे उच्चतम स्तर के उस समाज को अपनी पैनी दृष्टि से चित्रित करती हैं जहाँ हमारी संस्कृति के श्रेष्ठ का क्षरण पूर्ण तीव्रता में हुआ है। उनकी कहानियों में अपनी तरह का स्त्री—विमर्श है जहाँ स्त्रीवाद के प्रचलित नारों के मुहावरो से अपने को अलग खड़ा करता है, वे पुरुष वर्चस्ववादी सामाजिक स्थितियों पर करारी चोट करती हैं किन्तु फिर भी उनके पात्र स्त्री—अस्मिता की रक्षा करते हुए जीवन में सामरस्य के पक्षधर हैं कृशितों की तोड़—फोड़ के नहीं। जीवन को पूर्ण वैविध्य में चित्रित करती उनकी कहानियाँ कहीं भी एकरेखीय और सपाट नहीं हैं, सश्लिष्ट रूप में वे बहुआयामी हैं, इसी कारण वे स्मृति में बस जाती हैं। स्मृति में बने रहना कहानी की बहुत बड़ी शक्ति है। वस्तुतः चित्रा की कहानियाँ हमारे समकालीन लेखन की गौरव हैं जिनका पाठ आश्वस्ति के साथ किया जा सकता है। लाक्षागृह एक भवन था, जिसने दुर्योधन ने पाण्डवों के विरुद्ध एक षड्यंत्र के तहत

उनके ठहरने के लिए बनवाया था। इसे लाख से निर्मित किया गया था। महाभारत का उल्लेख। महाभारत में ऐसा उल्लेख मिलता है कि एक बार पाण्डव अपनी माता कुन्ती के साथ वार्षावर्त नगर में महादेव को मेला देखने गये। दुर्योधन ने इसकी पवूर् सचू ना प्राप्त करके अपने एक मन्त्री पुरोचन को वहाँ भेजकर एक लाक्षागृह तैयार कराया। पुरोचन पाण्डवों को जलाने की प्रतीक्षा करने लगा। योजना के अनुसार पाण्डव लाक्षागृह में रहने लगे। घर को देखने से तथा विदुर के कुछ सक्तेतो से पाण्डवों को घर का रहस्य ज्ञात हो गया। विदुर के एक व्यक्ति ने उसमें गुप्त सुरंग बनायी, जिसके द्वारा आग लगने की स्थिति में निकल सकना सम्भव था। ^{स्थल1}

जिस दिन पुरोचन ने आग प्रज्ज्वलित करने की योजना की थी, उसी दिन पाण्डवों ने नगर के ब्राह्मणों को भोज के लिए आमन्त्रित किया। साथ में अनेक निर्धन खाने आये। सब लोग खा-पीकर चले गये, पर एक भीलनी अपने पाँच पुत्रों के साथ वहाँ सो रही। रात में पुरोचन के सोने पर भीम ने उसके कमरे में आग लगायी। धीरे-धीरे आग चारों ओर लग गयी। वह माता भाइयों के साथ सुरगं से बाहर निकल गया। प्रातःकाल भीलनी का उसके पाँच पुत्रों सहित मृत अवस्था में पाकर लोगों को पाण्डवों के कुन्ती के साथ जल मरने का भ्रम हुआ। इससे दुर्योधन बहुत प्रसन्न हुआ, किन्तु यथार्थता का ज्ञान होने पर उसे बहुत दुःख हुआ। लाक्षागृह इलाहाबाद से पूरू ब गंगा तट पर है। सन 1922 ई. तक उसकी कुछ कोठरियाँ विद्यमान थी, पर अब वे गंगा की धारा से कट कर गिर गयी। कुछ अंश अभी भी शेष है। उसकी मिट्टी भी विचित्र तरह की लाख की-सी ही है।

अन्य विवरण पाण्डवों के प्रति प्रजाजनों का पूरू य भाव देखकर दुर्योधन बहुत चिंतित हुआ। उसने जाकर धृतराष्ट्र से कहा कि वह किसी प्रकार पाण्डवों को हस्तिनापुर से हटाकर वारणावत भेज दे। प्रजाजनों को वह (दुर्योधन) जब अपने पक्ष में कर ले तब उन्हें फिर से बुलवा ले; अन्यथा प्रजाजन दुर्योधन को युवराज ने बनाकर युधिष्ठिर को बनाना चाहते हैं। धृतराष्ट्र ने उसका सुझाव तुरंत स्वीकार कर लिया। उन लोगों ने वारणावत प्रदेश की प्राकृतिक सुषमा का बार-बार वर्णन करके पाण्डवों को प्रकृति-सौंदर्य देखने के लिए प्रेरित किया।

दुर्योधन ने अपने मन्त्री पुरोचन की सहायता से वारणावत में पाण्डवों के रहने के लिए एक महल बनवाया। वह अत्यंत सुंदर था किंतु उसका निर्माण लाख आदि शीघ्र प्रज्वलित होने वाले पदार्थों से किया गया था। विदुर जी ने इस रहस्य को जाना तो तुरंत पाण्डवों को सावधान कर दिया।

विदुर के भेजे हुए एक विश्वस्त व्यक्ति ने गुप्त रूप से लाक्षागृह में एक सुरगं खोदी। पुरोचन अत्यंत सावधान रहने पर भी इस भेद को नहीं जान पाया। पाण्डव दिन भर मृगया के बहाने से बाहर रहते थे और रात को घर तथा पुरोचन पर पहरा रखते। एक बार कुन्ती ने बहुत-से ब्राह्मणों को भोजन कराया तथा गरीबों को दान दिया। उस रात एक

भीलनी अपने पांच बेटों के साथ उसी लाक्षागृह में सो गयी।

आधी रात को पांडव तथा कुतंती सुरंग के मार्ग से बाहर जंगल में भाग गये और भीमसेन ने भागने से पूर्व घर में आग लगा दी। लाक्षागृह में पुरोचन तथा अपने बेटों के साथ भीलनी जलकर मर गये। कुतंती तथा पांडवों के लिए विदुर ने एक विश्वस्त आदमी को नौका सहित भेजा था। सुरंग जिस जंगल में खुलती थी, वहाँ गंगा नदी थी। विदुर की भेजी हुई नौका की सहायता से वे लोग गंगा के दूसरी पार पहुँच गये।^{खण्ड 2} प्रत्येक युग का सामाजिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक जीवन अर्थ-प्रक्रिया से प्रभावित रहा है। विकास का आधार अर्थ ही है। समाज की आर्थिक प्रवृत्तियाँ संपूर्ण जीवन को प्रभावित करती हैं। जीवन का नियामक आज अर्थ है। जीवन की मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु अर्थ आवश्यक है। किन्तु बदलती परिस्थितियों में आर्थिक सम्पन्नता ही जीवन का ध्येय हो गया है। जब मूलभूत आवश्यकताएँ पूरी हो जाती हैं, तब मनुष्य उससे कुछ अधिक करना चाहता है, पाना चाहता है। जिससे भौतिक आवश्यकताएँ उत्पन्न होती हैं। इस भौतिकवादी चेतना के कारण फिर आपसी सम्बन्धों को निर्धारित करनी वाली धुरी अर्थ बन जाता है। जिससे परम्परागत मूल आस्थाएँ क्षीण होती जाती हैं। मानव जीवन के केन्द्रीय घटक के रूप में अर्थ की उपयोगिता और प्रासंगिकता आवश्यक रही है। प्रत्येक युग का सामाजिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक जीवन अर्थ-प्रक्रिया से

प्रभावित रहा है। विकास का आधार अर्थ ही है। समाज की आर्थिक प्रवृत्तियाँ संपूर्ण जीवन को प्रभावित करती हैं। जीवन का नियामक आज अर्थ है। जीवन की मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु अर्थ आवश्यक है। किन्तु बदलती परिस्थितियों में आर्थिक सम्पन्नता ही जीवन का ध्येय हो गया है। जब मूलभूत आवश्यकताएँ पूरी हो जाती हैं, तब मनुष्य उससे कुछ अधिक करना चाहता है, पाना चाहता है। जिससे भौतिक आवश्यकताएँ उत्पन्न होती हैं। इस भौतिकवादी चेतना के कारण फिर आपसी सम्बन्धों को निर्धारित करनी वाली धुरी अर्थ बन जाता है। जिससे परम्परागत मूल आस्थाएँ क्षीण होती जाती हैं। मानव जीवन के केन्द्रीय घटक के रूप में अर्थ की उपयोगिता और प्रासंगिकता आवश्यक रही है। अर्थ की सत्ता ही मनुष्य की जीवन शैली, रहन-सहन, आजीविका निर्वाह, आचार-व्यवहार, मनोविज्ञान आदि विविध पक्षों का निर्धारण करती है। अर्थ की व्यवस्था के आधार पर ही वर्गों का निर्धारण भी होता है। भारतीय समाज में अर्थ न केवल जीवन का नियामक है, बल्कि यह प्रत्येक

व्यक्ति की लालसा बनती जा रही है। व्यक्ति चाहे किसी भी वर्ग का हो, धनवान जरूर बनना चाहता है। आज की युवा-पीढ़ी पर धन का प्रभाव इतना अधिक है कि वे अपने जीवन का एक मात्र आधार अर्थ को ही मानते हैं। संसार, सभ्यता और प्रतिभा जैसी बातें कोई मायने नहीं रखती है। आज मानव अर्थ का ही अपना लक्ष्य मान लिया है। एक-दूसरे से व्यक्ति आज भावात्मक स्तर पर नहीं बल्कि आर्थिक स्तर पर जुड़ा है। पैसे का महत्व इतना बढ़ता जा रही है। अर्थ, समाज की केन्द्रीय शक्ति है। संसार के सभी कार्य-कलाप अर्थ पर ही आधारित हैं। सामान्यतः आर्थिक दृष्टि से उन्नत समाज को ही विकसित समाज कहा जाता है। वर्तमान में सामाजिक सम्बन्धों का आधार प्रमुखतः अर्थ बन गया है। “अर्थ ही समाज की शिराओं में बहने वाला वह रक्त है जो सम्पूर्ण समाज का जीवन संचालित करता है। प्रत्येक युग का सामाजिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक जीवन अर्थ-प्रक्रिया से प्रभावित रहा है। विकास का मूल आधार अर्थ ही है।

“अर्थ” समाज के निर्माण की पीठिका है, उसका आधार स्तम्भ है। कार्ल मार्क्स ने “पूंजी” के केन्द्रीकरण को अर्थहीनता एवं निर्धनता का कारण माना था। जीवन के स्तर पर ऊंचा उठाने का साधन है अर्थ। जीवन की आवश्यक आवश्यकता भोजन, वस्त्र, घर, अर्थ के उत्पादन, संचय एवं उपयोग पर आश्रित है। संसार के सभी व्यवहारों में अर्थ का मुख्य माना गया है, क्योंकि सभी कार्य व्यवहारों की प्राप्ति का मूल आधार अर्थ ही है। आर्थिक परिस्थितियां ही मनुष्य की प्रत्येक परिस्थितियों की निर्णायक हैं। आर्थिक पक्ष सबल होगा तो निश्चित तौर पर बाकी पक्ष भी सबल होंगे। मनुष्य की आजीविका, दैनिक जीवन की आपूर्ति से लेकर देश के सामाजिक, सांस्कृतिक एवं राजनैतिक बोध अर्थ के माध्यम से परस्पर जुड़कर युगीन परिवेश को प्रभावित एवं परिचालित करते हैं। समाज में आज अर्थ ही मुख्य बन गया है। चित्रा जी ने भी युगीन आर्थिक परिस्थितियों का वर्णन अत्यन्त ही सूक्ष्मता एवं व्यापकता से की है।^{१४३}

अध्याय –4

‘लाक्षागृह’ कहानी संग्रह में
आधुनिकता बोध

समकालीन महिला लेखन को अपने विशिष्ट लेखन से समृद्ध करने वाली प्रतिष्ठित एवं चेतना सम्पन्न साहित्यकार चित्रा मुद्गल का योगदान अतुलनीय है। स्त्री होने के कारण चित्रा जी स्त्री की समस्याओं, विसंगतियों, अन्तर्विरोधों, अन्तर्द्वन्द्व से भलीभाँति परिचित हैं। उनके कथा-साहित्य के अध्ययन, चिंतन-मनन के उपरान्त यह बात विशेष रूप से हमारे समक्ष प्रस्तुत होती है कि स्त्री स्वाधीनता, समानता, अधिकार, आत्म-सम्मान, शोषण, अन्याय, अत्याचार आदि विषयों पर चित्रा जी ने बेबाक लेखन किया है।

इनके साहित्य लेखन की विशिष्टता रही है कि इसमें कल्पना की उड़ान कम और यथार्थता का धरातल अधिक है। उपोक्तावादी समाज में कामकाजी स्त्रियों का दोहरी यंत्रणा, पीड़ा, संघर्ष को उजागर करती है। चित्रा जी इससे अपने अनुभव के व्यापक चिंतन से ग्रहण किया है और उसे साहित्य का रूप देने में समर्थ रही है।^{ख4}

उत्तर आधुनिकता के दौर में समाज के मापदण्ड और अवधारणाएँ तेजी के साथ परिवर्तित हो रहे हैं। परम्परागत जीवन मूल्यों के आधार पर यह मान्यता रही है कि स्त्री का कार्यक्षेत्र घर ही है, उसके बाहर अन्य क्षेत्रों में उसका प्रवेश वर्जित है। लेकिन वर्तमान समय समाज में इस धारणा में अभूतपूर्व परिवर्तन और परिवर्धन हुए हैं। आधुनिक परिप्रेक्ष्य में स्त्री अपनी प्रतिभा, लगन शिक्षा और सघर्ष के सहारे घर के अलावे बाहरी जगत के विविध क्षेत्रों में प्रवेश किया है। अपनी मेधा और सघर्ष के बलबतूँ स्त्रियाँ अपने 'स्व' के प्रति जागरूक हुई हैं, उनमें अस्मिताबोध और आत्मबोध की भावना जागृत हुई है। आत्मविश्वास से परिपूर्ण स्त्री सघर्षमय जीवन की हर चुनौती से न केवल जूझती है, बल्कि उसका समाधान खोजने में भी सक्षम है। सुशिक्षित और कामकाजी स्त्रियाँ जहाँ आर्थिक रूप से सम्पन्न हुई हैं वहीं उनके उत्तरदायित्वों में भी बढ़ोत्तरी हुई। डॉ० घनश्याम दास भुतड़ा ने लिखा है "नारी नौकरी करती हुई आर्थिक निर्भरता से सतर्कता प्राप्त करने की एक सीमा तक सफल हुई है, तथापि उसकी यह स्थिति विशेष उत्साहजनक नहीं। सामाजिक एवं पारिवारिक जीवन में 'एडजस्ट' न कर पाने के फलस्वरूप वह व्यर्थता बोध से भर जाती है। घर और बाहर के जीवन में समन्वय स्थापित न कर पाने से उसे नौकरी छोड़नी पड़ती है या तनाव की स्थिति को झलेते हुए अनचाहा जीवन व्यतीत करना पड़ता है।" चित्रा

मुद्गल की कहानियों में ऐसे अनेक स्त्रियाँ हैं, जो नौकरी करती हैं, तथा अपने परिवार को चलाती हैं। चित्रा मुद्गल के साहित्य में कामकाजी स्त्री की दोहरी कैद का जीवन्त चित्रांकन मिलता है। कामकाजी स्त्रियाँ स्वावलम्बी होकर घर-परिवार की स्थिति को आर्थिक सम्पन्नता तो प्रदान करती हैं, किन्तु स्त्री का व्यक्तित्व, मन, इच्छा, आकांक्षाएँ कई हिस्सों व टुकड़ों में विभाजित हो जाते हैं।¹

‘लाक्षागृह’ कहानी की सुनीता कामकाजी स्त्री है जो रेलवे विभाग में अच्छे पद पर कार्यरत है। लेकिन उसके जीवन की विडम्बना है कि वह सुन्दर नहीं है। अपनी असुन्दरता के कारण वह कुंवारी रह जाती है तथा उसकी छोटी बहनें परिणय सूत्र में बँध जाती हैं। सुनीता के विवाह के विषय में कई जगह प्रस्ताव भेजे गए किन्तु वह नापसन्द कर दी गई। वैवाहिक जीवन की चाह छोड़ चुकी सुनीता के जीवन में सिन्हा का आगमन होता है। सिन्हा भी रेलवे विभाग में कार्यरत है। सिन्हा सुनीता के समक्ष विवाह का प्रस्ताव रखता है जिससे सुनीता सहर्ष स्वीकृति देती है। उज्ज्वल भविष्य और सुखद वैवाहिक जीवन की लालसा में सुनीता अपनी सारी सम्पत्ति सिन्हा को दे देती है। वैवाहिक आनन्दमयी जीवन के सपने बुनती सुनीता को जब सिन्हा और उसकी विवाह की वास्तविकता पता चलती है तो उसके पैरों तले जमीन खिसक जाती है, सिन्हा कहता है “सोच, आठ सौ रुपये महीने कमाने वाली कहाँ मिलेगी? सौदे की कोई शक्ल-सरू त नहीं होती, मेरे यार मैं जीवन और व्यावहारिकता को एक-दूसरे का पूरक मानता हूँ।² सिन्हा की गंदी मानसिकता से परिचित हो सुनीता उसके विवाह के प्रस्ताव को ठुकरा देती है साथ ही एक पैर से अपाहिज देवेंद्र से विवाह करने के लिए राजी होती है, जिसे वह तिरस्कृत कर चुकी है। देवेन्द्र अपनी जीवन संगिनी से नौकरी नहीं करवाना चाहता है। अतः सुनीता रेलवे विभाग की नौकरी से इस्तीफा देती है। लेकिन देवेन्द्र की सगाई हो चुकी है और जल्द ही वैवाहिक बंधन में बँधने वाला है। स्वार्थांध और लोभी सिन्हा के इरादों पर सुनीता पानी तो फेर देती है, लेकिन स्वयं भी चोटिल हो जाती है। भूमंडलीकृत समाज में स्त्री ‘देह’ की मानसिकता से ऊबर नहीं पाई है। यदि स्त्री सौंदर्यविहिन हो तो उसके विवाह हेतु उसका कामकाज होना अनिवार्य विकल्प है। कारण रूप – सौन्दर्य में कुरूप स्त्री नगण्य है, लेकिन स्वावलम्बी होकर बस पैसा कमाने की मशीन बनने की नियति है, ऐसे मानसिकता पुरुष समाज को है यहाँ चित्रा जी ने कामकाजी स्त्री

की दुखती रग को पकड़ा है जहाँ स्त्री कराहती ही नहीं बल्कि पुरुष समाज की दी हुई पीड़ा से छटपटाती भी है।^{खण्ड 6}

‘दरमियान’ कहानी में कामकाजी स्त्री आकाक्ष ॥ दोहरी कैद में जकड़ी हुई एक तरफ वह दफ्तर की नौकरी व्यस्तता भरी दिनचर्या तो दूसरी तरफ अपनी बेटी मिनी के मध्य स्वयं बँट कर रह जाती है। कामकाजी आकाक्ष दफ्तर में रेगुलेरिटी बनाए रखने के लिए मिनी को लेकर कई समझौते करती है। वह सोचती है “औरत होना नरक है नरक ! कार्यालय से छूटे, इर्द-गिर्द चलते हुए मर्द थकान के बावजूद कितनी चुस्ती से लबरेज लोकल पकड़ने का आगे बढ़े जा रहे निश्चित ! निर्द्वंद्व । एक वह आशंकित, सहमी, समाज में जहाँ पुरुष जितनी स्वच्छन्दता, निर्द्वंद्वता के साथ रहता है स्त्री उतनी ही परम्परागत मूल्यों, रूढ़ियों, शारीरिक बनावट और प्रकृति के साथ निरंतर जूझती है।

कहानी में आकाक्ष ॥ का दफ्तर से निकलने के उपरांत एक दिन मासिक धर्म शुरू हो जाता है तथा वह मिनी को लाने शिशु विकास केन्द्र थोड़ा विलम्ब से पहुँचती है। वहाँ पहुँचने के क्रम में उसके मस्तिष्क में मिनी को लेकर अनेक अन्तर्द्वंद्व चलते हैं। लेकिन शिशु विकास केन्द्र पहुँचने के उपरांत वहाँ का परिदृश्य देखकर अचम्भित होती है खिलौनों के ढेर से घिरी मिनी खेलने में व्यस्त थी। उसके पास बैठी थी। मिसेज हर्पवाला की बड़ी लड़की ग्रेस किसी पत्रिका में डूबी हुई। उससे रहा नहीं गया अपराध बोध और खिसियाहट में मिले-जुले भाव से आक्रांत हो उसने पुकारा, मिनी अपनी माँ की विवशता को जान परिस्थितियों को अनुकूल बना लेती है और सदैव ‘माँ’ नाम की रट लगाने की जगह खेल में मन रमा लेती है मिनी के इस समझदारीपूर्ण समझौते के बाद आकाक्ष ॥ को महसूस होता है कि उसकी महत्ता, मातृत्व सुख से वंचित कर दिया गया हो। डॉ० मंगल कप्पीकर ने लिखा है “स्त्री जीवन से सम्बन्धित कुछ बातें और अनुभूतियाँ ऐसी होती हैं जिनका अहसास केवल स्त्री ही कर सकती है। माहवारी के समय होने वाली परेशानियों को एवं मनःस्थितियों को ‘दरमियान’ कहानी के द्वारा व्यक्त किया गया है। इस प्रकार के अछूते विषय को लेकर लिखी गई यह एक सशक्त कहानी है।^{खण्ड 7}

‘स्टेपनी कहानी की पात्रा आभा कामकाजी स्त्री है जो ऑफिस और घर दो पाटों में पिसती है । यद्यपि आभा आर्थिक निर्भरता के कारण आत्मविश्वास से परिपूर्ण खुशमिजाजी है तथापि अपनी बिखरी गृहस्थी का समेटने में असमर्थ है। कहानी में आभा और उसका पति विनोद दोनों कामकाजी हैं तथा उसकी बटेनी चिंकी को पूरा दिन क्रेच में रहना पड़ता है। कामकाजी स्त्रियों के लिए बड़ा संकट है कि घर और ऑफिस दोनों में से एक को भी अनदेखा किया तो स्त्री जीवन नरक में तब्दील हो जाता है । आभा को विनोद और नौकरानी बतासा के अनैतिक, अवैध सम्बन्ध के विषय में भनक लगती है तो वह प्रतिरोध करती है। लेकिन पति विनोद के प्रति हिंसक और तर्क-वितर्क ने आभा का चुप करवा दिया— “शायद कोई विकल्प नहीं है उसके हिस्से । गृहस्थी और आत्मनिर्भरता के मध्य अपने ‘स्व’ का सतुलन खोजते हुए कब वह अपने डी घर के लिए स्टेपनी हो गई और बताशा मुख्य चक्का कौन जाने !.. कामकाजी स्त्री होने के कारण आभा घर की देखभाल के लिए बताशा को रखने के लिए बाध्य है तथा बढ़ती महँगाई की मार से बचने के लिए नौकरी करके स्टेपनी की नियति स्वीकारती है। डॉ० अर्चना मिश्रा के मतानुसार “चित्राजी की लेखनी जितनी सहजता और सफलता से पारंपरिक भोज विशेषज्ञ और गृहकार्य तक सीमित है । गृहिणियों के जीवनदायी स्वरूप को रेखांकित करती है। उतनी ही दक्षता से आज के बदलते परिवेश में समाज के विस्तृत कार्य क्षेत्र से आबद्ध कामकाजी महिलाओं की समस्या और शोषण के नूतन संदर्भों को भी उघाटित करती चलती है।” ‘सुख’ कहानी में फूली नौकरानी के माध्यम से चित्रा जी ने कामकाजी स्त्री की यंत्रणा को प्रस्तुत किया है । उद्देश्य वैश्वीकरण के दौर में भाग-दौड़ और व्यस्ततापूर्ण जीवन ने कामकाजी स्त्रियों की कमर तोड़कर रख दी है एक तरफ दफ्तर का बोझ तो दूसरी ओर गृहस्थी का भार अपने कंधों पर ढोती दोहरी यंत्रणा में जकड़ी हुई है। कामकाजी स्त्रियों के स्वावलम्बन ने उन्हें आर्थिक संपन्नता और आत्मविश्वास प्रदान किया है। जिस तेजी के साथ स्त्रियाँ घर के कामकाज के साथ-साथ दफ्तर से जुड़ रही हैं ऐसे में यह साफ कहा जा सकता है कि दोहरे उत्तरदायित्वों को बखूबी निर्वहन करके वे अपने भविष्य को उज्ज्वल बना रही हैं।

उपसंहार

“साहित्य, राजनीति के पीछे चलने वाली सच्चाई नहीं बल्कि उसके आगे मशाल दिखाती हुई चलने वाली सच्चाई है।” 1936 में प्रगतिशील लेखक संघ के अध्यक्ष पद पर बोलें गये मुशी प्रेमचन्द के शब्द प्रगतिशील लेखिका चित्रा मुद्गल के संपूर्ण साहित्य का व्यंजित कर देते हैं। मैंने चित्रा मुद्गल के उपन्यासों का समाज शास्त्रीय अनुशीलन करने के बाद जो निष्कर्ष प्राप्त किये उस प्रस्तुत अध्याय में सार रूप में प्रस्तुत कर रही हूँ। अपने शोध ग्रंथ के आरंभ में मैंने प्रस्तावना को प्रस्तुत किया इसके बाद अध्याय दो में ‘सम्बद्ध साहित्य का पुनरावलोकन’ है जिसमें लेखिका के उपन्यासों से मिलते-जुलते कथानक, विषय, समस्या और विमर्श वाले प्रकरण को रखने की पूर्ण कोशिश की। लेखिका के चारों उपन्यास चार अलग विषयों पर होकर भी केन्द्रीय रूप में सामाजिक समस्या को उठाते हुए नजर आ रहे हैं। ऐसी समस्याएँ जो विकराल रूप लेती जा रही हैं और आने वाले खतरे से हमें आगाह कर रही हैं। लेखिका के प्रथम उपन्यास ‘एक जमीन अपनी’ जो विज्ञापन जगत की सच्चाई बयान करती दिखाई पड़ रही है। ‘आवा’ जो दलित, वंचित, मजदूर और पूँजीपति की संकीर्ण मानसिकता को उजागर करता है। ‘गिलिगडु’ जो भारतीय मूल्यों और परिवारवादी सांस्कृतिक चहचहाहट को खोता जा रहा है और चौथा उपन्यास ‘पोस्ट बॉक्स

नं. 203 नाला सोपारा' किन्नरों की व्यथा कथा कहता है। इन सभी उपन्यासों से सम्बद्ध लगभग 135 पुस्तकों, पत्रिकाओं, लेखों का पुनरावलोकन करने का प्रयास किया है। जिसकी वजह से चित्रा जी के उपन्यासों के व्यापक दृष्टिकोण और उद्देश्य को समझने में अत्यधिक मदद मिली है। जिसमें मिलन विश्नोई का 'किन्नर विमर्श' महेन्द्र भीष्म का 'किन्नर कथा' प्रदीप सौरभ का 'तीसरी ताली' नीरजा माधव का 'यमदीप', मनोज रूपड़ा का 'प्रतिसंसार' आदि किन्नरों की समस्या पर लिखे गये सभी उपन्यास है जिसको पढ़ने के बाद 'पोस्ट बॉक्स नं. 203 नाला सोपारा' के प्रति समझ विकसित हुई तथा जननांग दोषी व्यक्ति की उपेक्षा, पीड़ा, मानसिक, सामाजिक त्रासदी को अभिव्यक्त करने में सहायता मिली। डॉ. करुणा शंकर उपाध्याय का 'आवां विमर्श', अनुसूया त्यागी का मैं भी औरत हूँ, अब्दुल लतीफ का स्त्री विमर्श के बहाने सामाजिक परिवर्तन की आहट, कस्तूरी चक्रवर्ती का 'जैनेन्द्र के उपन्यासों में' अभिव्यक्त स्त्री बोध आदि आवां उपन्यास को दलित और स्त्री आंदोलन के नये प्रतिमान के रूप में स्थापित करने में मदद मिली। ये पुस्तकें दलित, पिछड़े और स्त्री विमर्श का पुरजोर समर्थन करती हैं। 'आवां विमर्श' में डॉ. इंदु प्रकाश पाण्डेय, डॉ० करुणा शंकर उपाध्याय, कल्याणमल लोढा, डॉ. विजेन्द्र नारायण सिंह, डॉ. शिव कुमार, डॉ. रेखा अवस्थी, डॉ. भगवान सिंह, माजदा असद, डॉ. विजय बहादुर सिंह आदि ने 'आवा' पर अद्भुत आख्यान प्रस्तुत किया है। 'स्त्री चिंतन की चुनौतियाँ रेखा कास्तवार और 'स्त्री कविता पहचान और द्वंद्व', 'स्त्री कविता और परिप्रेक्ष्य' रेखा सेटी ने स्त्रियों की दशा के लिए समाज के ढाँचे को जिम्मेदार ठहराया है जो पितृ सत्ता और मातृ सत्ता जैसे वर्चस्व मूलक समाज गढ़ता है। चित्रा मुद्गल ने गिलिगडु उपन्यास में 'बुजुर्गों' की व्यथा कही है। बुजुर्गों का ही आधार बनाकर धीरेन्द्र प्रताप सिंह ने 'बुजुर्गों का वर्तमान' किरन सिंह 'बुजुर्ग अपनी मानसिकता बदले', राजीव रंजन का विकास के मौजूदा मॉडल में ही है बुजुर्ग का वर्तमान भी' आदि लेख लिखे गये हैं जिसमें बुजुर्गों के वर्तमान अवहेलना एवं उनके मन की पीड़ा को संवेदनात्मक तरीके से उभारा गया है। परू। युवा वर्ग मृगमारीचिका की तरफ भाग रहा और इसके पीछे छूट रहे हैं बुजुर्ग, उनकी शान्ति, भावनात्मक सम्बल आदि। अपने शोध प्रबन्ध के तीसरे अध्याय में मैंने चित्रा मुद्गल के

व्यक्तित्व व कृतित्व का

सामान्य परिचय दिया है। चित्रा मुद्गल का व्यक्तित्व बहुआयामी है। उनमें एक आदर्श पत्नी, माँ, सास, दादी जैसे सभी पारिवारिक रिश्तों को सजं ने के साथ-साथ एक स्पष्ट वक्ता खरी लेखिका, संघर्षशील नारी की तेजस्वी तथा नेत्रत्वकारी भूमिका का अद्भुत संयोग उनके व्यक्तित्व में देखने को मिलता है। उनके व्यक्तित्व में विद्रोह से लेकर सारे आयामों में सर्व सत्ता का समन्वय देखा जा सकता है। लेखिका को अपनी बात कहने की बवेली, दृढ़ता, समन्वय शक्ति मूल्यों का स्वीकार और रूढ़ियों का नकार, ये सारे आयाम मिलकर उनके व्यक्तित्व को हिमालय सी ऊँचाई प्रदान करते हैं। वह एक निर्भय पत्रकार, कुशल वक्ता, सर्वोदनशील समाज सेवी और प्रखर चेतना की स्वामिनी है। लेखिका के चेहरे का दीप्तिमान आभामण्डल सहज ही अपनी ओर आकर्षित करता है। जिसपर निर्धनों असहायों मजदूरों और महिलाओं के लिए लड़ने की चमक स्पष्ट महसूस की जा सकती है। उनकी बहुमुखी प्रतिभा ही उनकी पहचान है। उनके कृतित्व के अन्तर्गत उपन्यास, नाटक, कहानी, संस्मरण, आलेख, समीक्षा, कविता रेखाचित्र, निबन्ध, लेख, साक्षात्कार आदि हैं। जिनका संक्षिप्त परिचय मैंने अपने प्रबन्ध में दिया है। लेखिका ने मुख्यतः चार उपन्यासों की रचना की जिसकी वजह से उन्हें अधिक प्रसिद्धि मिली। अब तक उनके चार उपन्यास, सोलह कहानी संग्रह, तीन नाटक, तीन वैचारिक संकलन, सात सम्पादित पुस्तकें तथा मेरे साक्षात्कार प्रकाशित हो चुके हैं। लेखिका की समस्त कहानियाँ 'आदि-अनादि' के नाम से तीन खण्डों में प्रकाशित हो चुकी हैं। इनकी अनेक अनुदित रचनाएँ भी हैं। लेखिका एक ऐसी कथाकार हैं जिनकी कहानियों पर फिल्म भी बनी हैं तथा धारावाहिकों का निर्माण भी हुआ है। वह नवचते ना जगाने वाली सशक्त रचनाकार हैं। लेखिका अपनी रचना के माध्यम से समाज में युगबोध, सामाजिक चिंतन, आक्रोश, आस्था, प्रेम अनुभूति, आधुनिकता, बाजारवाद, हर्ष, विषाद विसंगति आदि को प्रस्तुत करती हैं। लेखिका ने सामाजिक आर्थिक परिदृश्य फिल्मी ग्लैमर विज्ञापन जगत एवं मजदूर यूनियन संघ की वस्तु स्थितियों को उन्होंने अपने साहित्य में उभारा है। वास्तव में लेखिका ने अपने साहित्य में सर्वोदनओं को परत-दर-परत उकेरा है। हमने उनके उपन्यासों को इसी परिप्रेक्ष्य में दिखाने का प्रयास किया है। अपने शोध प्रबन्ध के चौथे पड़ाव में मैंने समाज शास्त्रीय अध्ययन का स्वरूप एवं विश्लेषण किया है। जिसमें समाज शास्त्र क्या है। साहित्य का समाजशास्त्र क्या है। इससे संबंधित विद्वानों और समाज शास्त्रियों के विचार एवं कथन, परिभाषा तथा

क्षेत्रे आदि पर शोध कार्य किया है। भारतीय साहित्य में कविता, उपन्यास, नाटक आदि में समाजशास्त्र का समाजवादी चेतना से क्या संबंध है तथा समाज शास्त्र समाज के संपूर्ण साहित्य अथवा

कृति का प्रत्यक्ष अप्रत्यक्ष कहाँ तक विश्लेषण करता है। अपने शोध प्रबन्ध के पाँचवें पड़ाव में मैंने चित्रा मुद्गल के 'उपन्यासों का समाज शास्त्रीय अध्ययन' किया है। वर्तमान समय में भूमंडलीकरण, नगरीकरण, बाजारीकरण, विज्ञापन युग, पश्चिमीकरण के कारण समाज में जटिलता कहाँ तक उत्पन्न हुई है और चित्रा जी के उपन्यास इन समस्याओं को हमने अपने छठवें पड़ाव में वर्तमान सामाजिक परिप्रेक्ष्य में सन्दर्भित करने में सामाजिक, सांस्कृतिक, पारिवारिक, आर्थिक एवं राजनैतिक रूप से किया है तथा वर्तमान भारतीय मूल्यों को कहाँ तक संक्रमित किये हैं, इस पर भी प्रकाश डालने का प्रयास किया है। लेखिका का संपूर्ण कथा साहित्य सामाजिक चिंतन का स्वरूप, समाज के स्वरूप के रूप में व्यक्ति चेतना, नारी चेतना, बाल चेतना के रूप में मुखरित हुआ है। उन्होंने सामाजिक विडंबनाओं, विकृतियों तथा मानवीय संवेदना पर गहराते संकट की बड़े गहराई से पड़ताल कर अनेक समस्याओं को उभारा है उन्हीं में कुछ प्रमुख समस्याओं को मैंने अपने इस अध्याय में प्रस्तुत किया है। लेखिका का प्रथम उपन्यास 'एक जमीन अपनी' में बाजारवाद की समस्या, स्त्री संबंधी समस्या, नौकरी पेशा स्त्रियों को अपने ऑफिस में सहकर्मियों के गॉसिप बनने की समस्या, लिव-इन-रिलेशनशिप में रह रही स्त्रियों की सन्तानोत्पत्ति के बाद की समस्या, पारिवारिक बँटवारे के समय टूटती मानवीय संवेदना की समस्या जिसको लेखिका ने अपने उपन्यास में उठाया है। इन समस्याओं को मैंने वर्तमान समाज के परिप्रेक्ष्य में सन्दर्भित करने का प्रयास किया है। चित्रा मुद्गल ने अपने कालजयी उपन्यास आवां में मजदूर समस्या स्त्री समस्या आदि को उठाया है। श्रमिक समाज का एक बड़ा हिस्सा है, लेखिका ने इस हिस्से को जिया, भोगा और अनुभव किया। आवां पूर्णतः श्रमिक राजनीति का ही अड्डा है। यह उपन्यास में यथार्थ की पृष्ठभूमि पर देखेदृष्टि से महसूस किये पात्रों से युक्त उत्कृष्ट कोटि का उपन्यास है। इसमें मजदूर राजनीति के विरोध आपसी, वैमन्यस्य, प्रतिद्वन्द्विता और अपराधिकता का ववेत्की से चित्रण लेखिका ने किया है। लेखिका ने इस उपन्यास में जाति धर्म और साम्प्रदायिक समस्या को ज्वलंत रूप में उठाया है। जिस प्रस्तुत अध्याय में विवेचित किया गया है। एक अच्छा साहित्यकार किसी राजनीति कर्मठ से

‘ कम नहीं होता, राजनीति को अपने साहित्य से पृथक करना साहित्य को एकांगी बना देता है । लेखिका अपने मस्तिष्क की स्वाधीनता को किसी भी स्तर पर गिरवी रखना नहीं चाहती वह इनके उपन्यासों में स्पष्ट रूप से दिखाई देता है तथा तत्कालीन साहित्य संस्कारों का प्रतिविम्ब उनके साहित्य पर पड़ता है तथा राजनीतिक विचारधाराओं या कर्तव्य को समझने में जिस राजनीतिक चर्चा को अपृथक् समझा जाता है चित्रा जी उन पर वेवाकी से बोलती है। मजदूरों की चालों, उनके बीच पनपने वाले स्त्री-पुरुष संबंधों उनकी लाचारियों और उनके संघर्षों का लेखिका ने श्रमिकों के माध्यम से बहुत ही बारीकी से चित्रण किया है। पूँजीवादी व्यवस्था मनुष्य की गरिमा के साथ कैसे खिलवाड़ करती है और मजदूरों की लाचारी का कैसे फायदा उठाती है इसका यथार्थ चित्रांकन हिंदी साहित्य में किसी लेखिका द्वारा पहला साहस किया गया है। आवां में मजदूर यूनियन और उसके कार्य व्यवहार का सक्षम से सक्षम रूप दिखाया गया है।

निरन्तर गतिशीलता प्रकृति का नियम है। विचारशील चिंतक आदिकाल से ही इसे विकास या परिवर्तन की सज़ा से अभिहित करते हैं। ठहरा समय और अपरिवर्तित समाज की परिकल्पना नहीं की जा सकती। तात्कालिक घटनाओं से प्रेरित और परिचालित युगीन प्रतिमान साहित्य के विभिन्न आयामों से स्पन्दित होकर अपने युग के जीवनादर्शों, मान्यताओं और चेतना को ही मुखरित करते हैं। आज का परिवेश भी सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनैतिक, आर्थिक, धार्मिक और शैक्षिक सदंर्भों में व्यापक बदलाव के साथ उपस्थित है। दीर्घकालीन विदेशी गुलामी और पाश्चात्य प्रभाव में हमारे सामाजिक पारंपरिक मूल्यों को क्षतिग्रस्त किया है। भ्रष्ट राजनीतिक चिंतन के दूषित प्रभाव से समाज अवनति और पतन की ओर अग्रसित है। बाजारवाद की अंधी दौड़ औद्योगिकता के दूरगामी परिणामों से संचालित अर्थ की श्रंखलाओं ने विश्व के परिदृश्य को उपभोक्तावादी संस्कृति में आबद्ध कर लिया है। भूमण्डलीकरण ने मानव को उपेक्षित कर अर्थ की ही सत्ता प्रतिष्ठित की है। विज्ञान एवं तकनीक के नये-नये आविष्कार से पूरी दुनियाँ एक वैश्विक गाँव में तब्दील हो चुकी है तथा स्थलीय और भौगोलिक दुनियाँ अपनी अर्थवत्ता खो चुकी हैं। वर्तमान विश्व व्यवस्था आर्थिक और व्यापारिक आधार पर ध्रुवीकरण और पुर्नसंगठन की प्रक्रिया से गुजर रही है। ऐसी स्थिति में साहित्यकार का समाज के प्रति चिंतन और महत्वपूर्ण हो जाता है। लेखिका के संपूर्ण कथा साहित्य में उनके सामाजिक चिंतन का स्वरूप परिलक्षित

होता है अपन॑ प्रबन्ध के सातवे॑ विश्राम मे॑ मैंने चित्रा जी के उपन्यासों मे॑ चित्रित 'समाजशास्त्रीय विचार' को प्रस्तुत किया है। उन्होन्॑ समकालीन परिवेश का॑ अपन॑ कथा साहित्य मे॑ अपरिचित और अमूर्त व्यापकता से बचकर भोगे हुए यथार्थ के निजी दुनियाँ के सीमित संसार को तात्कालिक और आधुनिकता के मुहावरे में सृजित किया है। चित्रा मुद्गल के कथा साहित्य के समकालीन परिवेश की समस्याओं, सामाजिक व्यवस्थाओं, प्रतिकूलताओं, चुनौतियों, अन्तर्विरोधों, विसंगतियों, विद्रूपताओं और वर्तमान समाज की जटिलताओं व यन्त्रणाओं तथा यथार्थवादी जीवन प्रखरता के स्पष्ट दर्शन होते हैं। उपर्युक्त समस्याओं पर इन्होन्॑ अपन॑ उपन्यासों और कहानियों मे॑ समाजशास्त्रीय विचार प्रस्तुत किए हैं। चित्रा मुद्गल के उपन्यास तत्कालीन सांस्कृतिक चेतना के उज्ज्वल स्वरूप हैं। वह अपन॑ समसामयिक समाज की सार्वजनिक समस्याओं को तथा उसमें गहराई से अपनी पैठ बना चुके विद्रूपताओं को चित्रित करती हैं। साहित्य अपन॑ समय के युग की अभिव्यक्ति है। तत्कालीन राष्ट्रीय सांस्कृतिक चेतना

का उज्ज्वल स्वरूप है। चित्रा मुद्गल ने अपने कथा साहित्य मे॑ अपने समय की महान सार्वजनिक समस्याओं में गहराई से पैठ यथार्थ के सच्चे सार को, जैसा कि उन्होन्॑ देखा, भोगा, अनुभव किया, सहृदयता से चित्रित किया है। समाज के प्रति यह सहृदयता का भाव ही युग — सन्दर्भ के रूप मे॑ चित्रित हुआ है। समकालीन जीवन का विसंगति बोध, सत्रास, तार्किक, वृद्ध, समस्याओं, स्त्री-पुरुष मानसिकता, बालकों का यथार्थ जीवन चित्रण, पारिवारिक आर्थिक परिदृश्य, राजनीतिक अवमूल्यन, फिल्मी ग्लैमर, विज्ञापन जगत और मजदूर यूनियन की सध॑ गतक की वस्तु स्थिति, नारी का शारीरिक, मानसिक, आर्थिक शोषण, पुरुष द्वारा उसे विश्वास मे॑ लेकर उससे छलकपट, दुराव — छिपाव, लड़क॑ लड़की मे॑ भेद, राजनेताओं का छलकपट, जमींदारों, जागीरदारों द्वारा मजदूर वर्ग का शोषण आदि का युग सन्दर्भ के परिप्रेक्ष्य में लेखिका ने बखूबी चित्रित किया है। चित्रा मुद्गल के कथा साहित्य की रीढ़ 'स्त्री' हैं जो समाज का भी आधा पक्ष है। इनकी रचनाओं मे॑ समाहित महानगरीय परिवेश एक ओर झुग्गी-झोप॑ड़ियों के सामाजिक करुण पक्ष से हमें द्रवित करता है, तो दूसरी ओर पाश्चात्य अंधानुकरण के दुष्परिणामों को भी सम्मुख रखता है। लेखिका जनतांत्रिक पद्धति मे॑ राजनीति के दोषों से वाकिफ है। राजनीति के नाम पर

वर्ग—विभाजन और जातिगत वैमनस्य उन्हें मान्य नहीं। नेताओं का अधिकार लिप्सा, सत्ता मोह, षडयन्त्र और दोहरे चरित्रों की पोल वे अपनी रचनाओं में खोलती हैं।

साहित्यकार एक सामाजिक प्राणी होता है। वह समाज में रहते हुए समाज से अछूता नहीं रह सकता। चित्रा मुद्गल प्रगतिशील लेखिका है। प्रगतिशील लेखक अपने समय के यथार्थ का अपने साहित्य में बिम्बित करता है। आधुनिक परिस्थितियों को देखते हुए वैचारिक धरातल के रूप में चित्रा जी का कथादृसाहित्य मुख्य भूमिका अदा कर रहा है। आधुनिक भारतीय समाज और संस्कृति के अनेक अंधेरे—उजाले पक्षों का सटीक लेखा—जोखा प्रस्तुत करता वृहत् उपन्यास 'आवा' चित्रा मुद्गल की सतत चेतना एवं सूक्ष्म दृष्टि का प्रतीक है। वह चित्रा मुद्गल का एक सशक्त प्रयास है।

सगं ठन अजेय शक्ति है। सगं ठन हस्तक्षेप है। सगं ठन प्रतिवाद है। सगं ठन परिवर्तन है, क्रांति है, किंतु यदि वही सगं ठन शक्ति सत्ताकांक्षियों की लोलुपताओं के समीकरणों की कठपुतली बन जाये तो दोष उस शक्ति की अंधनिष्ठा का है या सवारी कर रहे उन दुरुपयोगी हाथों का है जो सगं ठन शक्ति को सपनों के बाजार में बरगलाएदू भरमाए वोटों की रोटी सेंक रहे हैं। ये खतरनाक कीट बालियों को ही नहीं कुतर रहे फसल अंकुशाने के पूर्व जमीन में छुपे बीजों को ही खोखला किए दे रहे हैं। क्या हुआ उन मोर्चों का जिनकी अनवरत मुठभेड़ों की लाल तारीखों में अभावग्रस्त दलित, शोषित श्रमिकों की उपासी आंतों की चीखती पीड़ा खदक रही थी? क्या हुआ उन लोगों का जिन्होंने कभी परचम लहराया था कि वे समाज की कुरूपतम विसंगति आर्थिक वैषम्य को खदेड़ समता के नये प्रतिमान कायम करेंगे, प्रतिवाद में तनी आकाश भेदती मुद्रियों से वर्गहीन समाज रचेंगे — गढ़ेंगे, जहाँ मनुष्य होगा। पूँजीपति या निर्धन नहीं। पकायेंगे अपने समय के आवां को, अपने हाड़ मांस के अभीष्ट ईंधन से, ताकि आवां नष्ट न होने पाये। विरासत भेड़िये की शक्ल क्यों पहन बैठी हैं? ट्रेड यूनियन जो कभी व्यवस्था से लड़ने के लिए बनी थी, आजादी के साठ वर्षों के बाद क्या आज वह विकृत, भ्रष्ट स्वरूप धारण करके स्वयं एक समानान्तर व्यवस्था नहीं बन गई? चित्रा जी की सुविचारित रचनाएँ, 'आवा', 'जगदम्बा बाबू गाँव आ रहे हैं', 'लपटे', 'बलि', 'बाघ', 'लिफाफा' आदि अपनी तरल गहरी संवेदनात्मक पकड़

और भेदी पड़त ाल के अन्तरव्याप्त रचना कौशल पाठकों को आत्मालोचन के कटघरे में खड़ा करती हैं और उनके विवके को कुरेद कर नवजीवन के प्रति उनकी जिम्मेदारी की याद दिलाती हैं।

चित्रा मुद्गल की कृतियों में आज की रक्तरंजित राजनीत की लोमहर्षक दृश्यों की दिल दहला देने वाली अनुगूँज है जिसमें 'बन्द' की राजनीति, स्वार्थों की 'सवे' छल का 'पाठ' सबल के हित में निर्मल और सरल और निष्कपट लोगो की 'बलि', पुलिस वालों के जालिम 'चेहरे', न्याय चौखट पर दम तोड़ते भुक्त भोगियों के 'बयान' और 'आवा' की भट्टी में तपते सुलगते श्रमिक संगठनों, चुनाव तंत्र की भयानकता सभी कुछ विद्यमान है जो हमें झकझोर कर सोचने और इस दिशा में सार्थक पहल के लिए प्रेरित भी करता है। किसी भी कथा साहित्य में सामाजिक सच, अनुभव, कल्पना एवं भाषा, उसकी अपनी ताकत होती है। चित्रा मुद्गल के संपूर्ण कथा – साहित्य में सामाजिक सच का चित्रण इतने खुले तथा व्यावहारिक रूप से सामने आया है कि पाठक चकित और अनुत्तरित हो जाते हैं।

चित्रा मुद्गल के समस्त साहित्य में विद्यमान उसके वैचारिक चिंतन तथा सवं दे ना को सही परिप्रेक्ष्य में जाँचने परखने का कार्य किया है। इसके साथ उनका उपन्यास समाजशास्त्रीय अनुशीलन किस प्रकार हिंदी कथा साहित्य की नूतन उपलब्धि बन गया है। इसके वर्तमान अवदान को हमने प्रस्तुत करने का प्रयास किया है। विचारशील चिन्तक अनादि समय के प्रत्येक घुमाव को विकास या परिवर्तन की संज्ञा से अभिहित करते हैं। ठहरा समय और अपरिवर्तित समाज की परिकल्पना भी व्यर्थ है। समकालीन कथा साहित्य में चित्रा मुद्गल ने कथ्यगत संवेदना के रूप में गुणात्मक परिवर्तन दिखाई पड़ता है। उनका कथा साहित्य समग्र परिवेश में फैलकर देश और काल के प्रमाणिक चेतना से पाठकीय संवेदना को झकझोर देता है। चित्रा मुद्गल के कथा साहित्य के समकालीन परिवेश में सामाजिक समस्याओं, व्यवस्थाओं के चिंतन का महत्त्वपूर्ण स्थान है। लेखिका ने बम्बई की झोपड़पट्टी का जीवन एक पत्रकार की हैसियत से देखा जाना और समझा तथा अपने कथानक का आधार बनाया। वह स्वयं उस जीवन की साक्षी हैं। उन्होंने इसकी चर्चा भी की कि उनकी आठ बाई आठ की वह खोली जो मुंबई के भांडुप में स्थित थी उसे कमलेश्वर रवींद्र कालिया और ममता कालिया ने देखा तथा समझा था जहाँ वे अवध नारायण मुद्गल जी से प्रेम विवाह के बाद कई बरस रही। उस जीवन को उन्होंने बहुत करीब से देखा

जिया जहाँ टॉयलटे के लिए घंटों लाइन लगाना पड़ता था। पानी भरने के लिए सुबह हंडों की लम्बी लाइन लग जाती थी। आग का वह दरिया चित्रा जी ने स्वयं तैरकर पार किया। इसलिए उसके ताप को वह पूरी तरह से महसूस करती हैं और उस नरक सदृश इलाकों के निम्न वर्ग की बुनियादी जरूरतों की लड़ाई भी उन्होंने स्वयं लड़ी। 'आवां', 'एक जमीन अपनी', 'गिलिगडु' 'पोस्ट बॉक्स न. 203 नाला सोपारा', 'भूख', 'जगदम्बा बाबू गाँव आ रहे हैं', 'फातिमाबाई कोठे पर नहीं रहती आदि रचनाएँ समकालीन परिवेश का यथार्थ अंकन प्रस्तुत करती हैं। इन रचनाओं में स्त्री पीड़ा उनके रूपों में बिखरे पड़े हैं। 'एक जमीन अपनी' में विज्ञापन की दुनियाँ में पिसती हुई स्त्री का चित्रण है जिन्हे घर की जरूरतों ने विज्ञापन मंडी में ले जाकर खड़ा कर देती हैं। लेखिका ने अपनी समझ और चतुराई से सभी महिलाओं को देवी और सभी पुरुषों को दरिद्र नहीं बनाया है। 'एक जमीन अपनी' में लेखिका ने स्त्री विमर्श को भावुक समझदार और जिम्मेदार बुद्धिजीवी के अवधारणा में बदलती नजर आती हैं। इनके कथा साहित्य में स्त्री स्वयंसिद्धा है और वह प्रमाणित करना चाहती है कि उसका स्वयं का वजूद है। वह अपने अधिकारों की लड़ाई स्वयं लड़ना जानती है। लेखिका के स्त्री संबंधी विचार में अन्याय के प्रतिकार में खड़ी स्त्री भंगिमा के साथ नारी के राजनैतिक, धार्मिक और आर्थिक प्रस्थान, उनके उत्थान और पतन से संबंधित विभिन्न पक्षों, समाज प्रदत्त उसके अधिकार, कर्तव्य बदलती स्थितियों में नारी की भूमिका और योगदान आदि पर बड़ी समग्रता और सतुलित दृष्टिकोण से विचार किया है। लेखिका के साहित्य का केंद्रीय रूप भी यही है। उनके स्त्री चरित्र अन्याय और शोषण के विरुद्ध नारी जागरण और मुक्ति के सदेश वाहक हैं। उन्होंने स्त्री को धर्म, नैतिकता, मर्यादा, परंपरा और रीति-रिवाज के विपरीत होकर भी समझने की कोशिश की। उन्होंने यौन शोषण के विरुद्ध आवाज बुलन्द की तथा स्त्री विडंबनाओं को बड़े शिद्दत से अभिव्यक्त किया तथा स्त्री को पुरुष के बराबर अधिकार प्राप्त करने के लिए उत्प्रेरित किया। लेखिका किसी भी स्त्री को सहमति असहमति के बावजूद उसे हल्के में लेना बर्दाश्त नहीं कर पाती। लेखिका हर घर परिवार की चौहद्दी पर सतत छटपटाती स्त्री को पीठ दिखाकर प्रकृति के मनोरम सौंदर्य को बुनने में व्यस्त नहीं हो सकती वे स्त्री के अस्तित्व की अस्मिता, वैचारिकता, अनुभूति तथा संस्कार को तर्कशीलता के साथ जोड़ते हुए उसे एक इसान के रूप में प्रतिष्ठित करती हैं। इस दिशा में उनका सक्षम सवं देना की जगह बढ़बोलापन, दार्शनिक

विवेचन की जगह राजनीतिक समीकरण तथा पीड़ा की काखों में जन्मे परिपक्व विश्लेषण की जगह आक्रोश में पिघलता आंदोलन धर्मी जुनून उनकी सर्वेदना और वैचारिकता दोनों का संवाहक बन जाता है उन्हें अपनी जमीन पर खड़े होने का आधार देता हुआ। लेखिका के संपूर्ण कथा साहित्य में उनकी स्त्री पात्र इसी जमीन पर जुझारूपन और सघर्षशीलता से खड़ी दिखाई पड़ती है। जो विभिन्न परिस्थितियों में लड़कर अपने ओजस्वी और जुझारू व्यक्तित्व को स्थापित करती हैं। शोध प्रबन्ध के आठवें विश्राम में मैंने चित्रा मुद्गल के उपन्यासों के भाषा और शिल्प विधान का समाजशास्त्रीय अध्ययन किया है। चित्रा मुद्गल की भाषा पाठकीय रुचि के अनुरूप स्वाभाविकता प्रदान करने वाली है। इनके कथा साहित्य में प्रयुक्त भाषा पात्रानुकूल और बहुमुखी है जो लोक जीवन से लेकर महानगरीय के जीवन जटिलता को पूरी सिद्धि के साथ अभिव्यक्त करती है। वे भाषा की आवश्यकतानुसार प्रतीकों, बिंबों, उपमानों, लोकोक्तियों इत्यादि का भी प्रयोग करती हैं। इनकी भाषा में गहराई के साथ सक्षमता भी विद्यमान है। इनका अभिव्यक्ति पक्ष बहुत ही सशक्त है। जिससे प्रस्तुत करने का ढंग बिल्कुल अलग है। लेखिका के पास कथा कहने की अद्भुत कला है। लेखिका के पास कथा कहने की अद्भुत कला है। इनकी कौतूहलपूर्ण, प्रवाहमयी और पठनीय है। संस्कृतनिष्ठ शब्दों के अलावा वह स्थानीय शब्दों की प्रधानता के साथ ही हिंदी की जातीय प्रकृति के निकट भी हैं। आम बोलचाल की भाषा के साथ ही इनकी भाषा में अवधी, मराठी, हिंदी, उर्दू, गुजराती, झोपड़पट्टी की आम बोलचाल की भाषा आदि का प्रयोग लेखिका ने किया है। इनकी भाषा में हैदराबादी उर्दू की खनक एवं खड़ी बोली का ठाट भी है। इनकी भाषा का सरल सहज पारदर्शी विन्यास पाठकों को चकित कर देता है। लेखिका के पात्रों में अंकिता मेहता, नीता, नमिता, बाबू जसवंत सिंह की भाषा में जहाँ सर्वदोषों की शिष्ट हिंदी है, वहीं पवार, नीलम्मा, किशोरी बाई, उर्मिला की भाषा मुंबईया हिंदी का पुट लिए हुए है। अक्खड़ और दबंग व्यक्ति वाले पवार की भाषा खुरदरी होते हुए भी उसके व्यक्तित्व को उभारती है। भाषा में नित्य नए प्रयोग करना चित्रा जी की विशेषता है। अपने सभी उपन्यासों में उन्होंने इसे आजमाया है। इनकी भाषा शास्त्र की बँडियों को खण्ड-खण्ड करती जनता से ही लेकर फिर उन्हीं के पास पहुँचती है। लेखिका विभिन्न आयु वर्गों के पात्रों की चारित्रिक और मानसिक सर्वेदनाएँ हिंदी, उर्दू, मराठी, ब्रज और अवधी भाषा का ताना-बाना पहनाकर विषय संरचना और मूल स्वर को सुखद विस्मय से भर देती है। उनकी लेखनी में

असंतोष, विद्रोह, राग—विराग में विविध प्रसंगों के साथ व्यंग—विनोद कटु—सरस, चुटीलेपन से भरपूर तो कहीं मुहावरों के साथ ताल मिलाकर कहानी की गति के साथ घुल मिलकर असीमित प्रभाव की सृष्टि करती हैं। तथा हिंदी पात्रों की पृष्ठभूमि का ध्यान रखती हैं। यह प्रकारांतर से उनकी भाषा का समाजशास्त्र है।

चित्रा मुद्गल ने अपने उपन्यासों की भाषा का बिंबात्मक रूप में प्रस्तुत किया है जो पाठक के मन में गहरी छाप छोड़ती हैं। जिसमें रूपगत अलंकारिक, प्राकृतिक, ऐन्द्रिक आदि अनेक प्रकार के बिंब विद्यमान। इन्होंने चक्षु, घ्राण, श्रवण, दृश्य आदि सभी इन्द्रियों को आधार बनाकर अपने बिंब प्रस्तुत किए हैं। अलंकार बिंब के द्वारा चित्रा जी ने भावों और सौन्दर्यानुभवों को व्यक्त किया है। जिसमें अनुप्रास, उपमा, रूपक, मानवीयकरण आदि अलंकार विद्यमान हैं। लेखिका के उपन्यासों में स्वाभाविक रूप से भाव एवं अलंकरण गुंथे हुए शब्द और अर्थ की भाँति अभिन्न दिखाई देते हैं। 'आवा' के कामगार अघाड़ी वाले तथा आम्रपाली के विज्ञापन के लिए लेखिका ने इसी भाषा का प्रयोग किया है। लेखिका की भाषा लालित्यपूर्ण, भावानुकूल, सरल और प्रवाहमयी है। जो आम जनता की नब्ज पकड़ने में सिद्धहस्त हैं। इनका पद, शब्द एवं वाक्य विन्यास बहुत ही सटीक है। लेखिका का पद विभाजन कारक, विभक्ति, वचन, लिंग, काल, पुरुष आदि की दृष्टि से बिल्कुल सटीक है इससे पता चलता है कि इन्हें व्याकरण का गहरा ज्ञान है। उनके उपन्यासों में तद्भव, तत्सम, देशज, विदेशज, उर्दू, अवधी, मराठी शब्दों का भरपूर प्रयोग है। मुहावरों और लोकोक्तियों का भी भरपूर प्रयोग किया है। साहित्य समाज की गतिविधियों और मानवीय संवदे नाओं के साथ—साथ सामाजिक प्रक्रिया भी है युग विशेष के घटनाक्रम और वैचारिक मान्यताएँ साहित्य में ही प्रतिफलित होती हैं। सामाजिक परिवेश के विविध स्तर और स्वरूप चित्रा जी की रचनाओं में जीवन्त है। ग्रामीण मंजर से लेकर महानगरीय अंचल तक, श्रमिक सगं ठनों से लेकर पत्रकारिता तक, भाषा संस्कृति से लेकर शिक्षा तक, दलित स्त्री से लेकर वृद्ध और किन्नर विमर्श तक, संवेदनाओं और युवा आक्रोश से लेकर वृद्धों की उपेक्षाओं तक, परंपरा में आबद्ध ग्रामीण सरलता से लेकर आधुनिक जीवन मूल्य तक सभी कुछ बड़े ठोस प्रमाणिक और रचनात्मक धरातल पर कुशलता से मुखरित हुआ है। इससे सिद्ध होता है कि चित्रा मुद्गल सम—सामयिक परिवेश को प्रतिबिम्बित करने वाली श्रेष्ठ रचनाकार है। लेखिका का साहित्य अपने आप में बजे पड़े हैं जिसने नवीन साहित्यकारों

को उपन्यास लेखन का नई सोच, वैचारिक समझ, ठोस धरातल एवं कलात्मक दृष्टिकोण प्रदान किया है। चित्रा जी का साहित्य उनके युग का यथार्थ प्रमाण है जाँ आज भी प्रासंगिक है। समय और वास्तविकता को पहचानने वाली चित्रा जी अपने तत्कालीन सदं भों का चित्रण करने में सिद्धहस्त हैं। लेखिका का कथा साहित्य नवीन भाव, विचार एवं चेतना से युक्त है जो अपने पात्रों को सशक्त, सबल, सधं षशील बनाने के उद्देश्य से की है और उसमें सफल भी हुई हैं। इनका साहित्य सर्वहारा समाज में चेतना जागृत करता है तथा उन्हें अपने अधिकारों के लिए सजग करता है। मजदूर के लिए समाज का निर्माण संभव नहीं है फिर भी उन्हें अपमान और जिल्लत सहते हुए अभावग्रस्त जीवन जीना पड़ रहा है। लेखिका ऐसे वचित समाज को जगाकर उन्हें उनके अधिकारों के लिए प्रेरित करती हैं। चित्रा मुद्गल समकालीन दौर की सशक्त लेखिका हैं अपने समकालीन कथा लेखिकाओं के मध्य उनका स्थान बहुत ही ऊँचा हो जाता है। वे दबे कुचले, मजलूम असहाय की हिमायत करती है तथा उसे घर परिवार तथा भारतीय परंपरा से अलग करने का विरोध करती हैं। वह चाहती है मजदूर, स्त्री, बच्चे, बूढ़े, किन्नर आदि को देखने का समाज का नजरिया बदले। उनका मानना है कि जिस दिन हमारा समाज इन मजलूमों को एक व्यक्तित्व के रूप में देखने लगेगा उसी दिन बहुत सारी रूढ़ियाँ स्वतः नष्ट हो जाएंगी। इसी को ध्यान में रखकर समाज की सभी समस्याओं को जो वर्तमान में विद्रूपता का रूप ले रही हैं उन्हें रूपायित करने का प्रयास किया है। चाहे वह वृद्ध समस्या हो, बच्चों की समस्या हो, किन्नर समस्या हो या फिर वर्तमान में स्त्री समस्याओं के रूप में तेजी से पाँव पसार रही लव जेहाद, ऑनर किलिंग, लिव-इन-रिलेशनशिप, सेरोगेसी, सामाजिक, साम्प्रदायिक, विज्ञापन जगत की उपभोक्तावादी संस्कृति आदि। लेखिका ने अपने समूचे कथा साहित्य में समाज के महत्त्वपूर्ण मुद्दों को उभारा है तथा उसके निदान का भी प्रयास किया है जिससे हम उनके साहित्य को भारतीय वचित वर्ग का दस्तावेज कह सकते हैं। इसमें वचित जीवन की तमाम आकांक्षाओं और उपलब्धियों का लेखा-जोखा है। इन्होंने क्वालिटी और क्वांटिटी दोनों दृष्टिकोणों से महत्त्वपूर्ण लेखन कार्य किया है। मैंने अपने प्रबंध में यथासंभव निरपेक्ष

भाव से इसे उद्धृत करने का प्रयास किया है। अंत में मैं यही कहना चाहूँगी कि चित्रा मुद्गल अपनी बने ाकी से सामाजिक चेतना का सचं ार करने वाली लेखिका है जिसकी

प्रासंगिकता अनवरत बनी रहेगी। इनका साहित्य समाज के व्यापक परिप्रेक्ष्य को अपने में समेटे हुए हैं। वह समाज के ऐसे मजलूम की आवाज बनी है जो किसी प्रकार से समाज के किसी वर्ग की आकांक्षा पूरी करने में असमर्थ हैं। हमारे देश में बढ़ते वृद्धाश्रमों और अनाथाश्रमों की उन्हें घनीभूत पीड़ा है। इसका कारण वह क्षरण होते भारतीय सांस्कृतिक मूल्यों की चह – चहाहट को मानती हैं।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. अंजु दुआ जैमिनी 'चित्रा मुद्गल के कथा साहित्य में सद्यः और चेतना', पृष्ठ-15 व 16
2. अंजु दुआ जैमिनी 'चित्रा मुद्गल के कथा साहित्य में सद्यः और चेतना', पृष्ठ-17
3. चित्रा मुद्गल, 'आवा', रामा प्रकाशन पृष्ठ-5
4. चित्रा मुद्गल, गिलिगडु, राकेश प्रकाशन इलाहाबाद, पृष्ठ-11
5. डॉ. करुणा शंकर उपाध्याय, आवां विमर्श, रामनाम प्रकाशन, पृष्ठ - 279-287
6. न्यू इंग्लिश डिक्शनरी, दा इण्डियन कवि, पृष्ठ - 13-14
7. आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, हिन्दी साहित्य का इतिहास पृ० सं० 12
8. मृदुला दिनकर, आलोचना (पत्रिका), जनवरी मार्च 1986, पृ० सं० 10
9. आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, हिन्दी साहित्य का इतिहास पृ० सं० 4
10. प्रमे चन्द्र, कुछ विचार, पृ० संख्या 145 नुकार प्रकाशन, वाराणसी
11. जयशंकर प्रसाद, 535 नागरणी प्रचारिणी सभा, वाराणसी, 455- 458
12. शिवपूजन सहाय, देहाती दुनिया, प्रथम संस्करण (1983), भूमिका प्रकाशन
13. प्रमे चन्द्र, कुछ विचार, पृ० संख्या, रामानन्द प्रकाशन
14. डॉ० इन्द्रनाथ मदान, आधुनिकता और हिन्दी उपन्यास, पृ० सं०
15. यशपाल, दिव्या (उपन्यास), भूमिका (1945), पृ० सं० 20-21 - 66
16. डॉ० देवराज उपाध्याय, हिन्दी साहित्य शब्द कोश (1979), पृ० सं० - 6
17. आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, हिन्दी साहित्य का इतिहास पृ० सं० 12